RNI Reg. No. HARHIN/2015/63352

पशुधन ज्ञान

वर्ष : 9 | अंक : 02 | जुलाई, 2023 | अर्धवार्षिक, हिसार | For Free Circulation only

प्रकाशक

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय

हिसार – 125004 (हरियाणा)

LALA LAJPAT RAI UNIVERSITY OF VETERINARY AND ANIMAL SCIENCES
लाला लाजपतराय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय
HISAR 2010
"राष्ट्रोन्नयनं पशुवर्धनम्"

विषय सूची

क्र.सं.	विषय	लेखक	पृष्ठांक
1.	कुक्कुट उत्पादन के संबंध में नैतिकता	स्मृति शर्मा, रविंदर एवं पार्थ गौर	1
2.	पशुपालन में पशु आहार जांच का महत्त्व	ज्योति शुन्थवाल, देवेन्द्र सिंह एवं राहुल यादव	4
3.	गुणकारी दलहनी चारे के लिए बरसीम की खेती	सतपाल	5
4.	बकरी प्रजनन: कृत्रिम गर्भाधान का आगमन और उसकी महत्वपूर्ण भूमिका	ज्ञान सिंह एवं अमित कुमार	7
5.	हाइब्रिड नापियर ग्रास– पशुओं के लिए उत्तम हरा चारा विकल्प	ज्योति शुन्थवाल, देवेन्द्र सिंह एवं राहुल यादव	9
6.	मवेशियों में कीटोसिस– कारण, निदान और उपचार	विपिन चन्द्रा एवं रोहिताश कुमार	10
7.	समेकित कृषि प्रणाली अपनायें: दुगुना मुनाफा पायें	कमलदीप, अनिका मलिक एवं आरजू	12
8.	शाश्वत पशुधन उत्पादन	अनिका मलिक, कमलदीप एवं आरजू	14
9.	बकरी पालन के लाभ	प्रिया, रचना शर्मा एवं प्रियंका दुग्गल	15
10.	दूधारू पशुओं में बेबेसिओसिस रोग (लहू मूतना) के कारण, लक्षण एवं निदान	मनीष शर्मा, बाबू लाल जांगिड़ एवं नीलेश सिंधु	17
11.	बैकयार्ड मुर्गी पालन के फायदे	पूनम रतवान, मनोज कुमार, एस.पी. दहिया, नवीन कुमार श्योराण एवं विकाश राठी	19
12.	भेड़ एवं बकरियों में रोग निदान के लिए नमूनों का एकत्रीकरण व भेजने की विधि	गौरी चंद्रात्रे, पंकज कुमार एवं वंदना भानोट	21
13.	खोया द्वारा बनाए जाने वाले मूल्य संवर्धित एवं पारपंरिक दूध उत्पाद	रेखा दहिया एवं मोनिका वर्मा	24
14.	भारत में स्वाइन फार्मिंग का महत्व और दायरा	करिश्मा चौधरी एवं विनोद कुमार पलसानिया	27
15.	बायो/गोबर गैस संयंत्र– गोबर का दोहरा उपयोग	सुजोय खन्ना एवं देवेन्द्र सिंह	28
16.	डेयरी अपशिष्ट: आय का नया स्रोत	हिमांशु शर्मा, ऋचा मिश्रा एवं शीतल पन्त	31
17.	इक्वाईन शुल	दिशांत सैनी, अंजु पुनिया एवं नीरज अरोड़ा	34
18.	मक्का– एक महत्वपूर्ण चारा फसल	सतपाल	35
19.	पशुधन के लिए चरागाह एवं उसका रखरखाव	पवन कुमार एवं करन महर	36
20.	हरा और पौष्टिक चारा वर्षभर: जानिए कैसे ?	श्रेया, सत्यवान आर्य, रवीश पंचटा एवं सतपाल	39
21.	घोड़ों की उम्र उनके दांतों से निर्धारित करना	दिशांत सैनी, अंजु पुनिया एवं नीरज अरोड़ा	41
22.	बाढ़ आपदा में डेयरी पशुओं	ज्योति शुन्थवाल, देवेन्द्र सिंह एवं सुजोय खन्ना	43
23.	डेयरी फार्म पर पानी की बचत करें: पर्यावरण बचाएं	ज्योति शुन्थवाल, देवेन्द्र सिंह एवं सुजोय खन्ना	44
24.	डेयरी फार्म अपशिष्ट प्रबंधन: स्वच्छता के साथ उच्च उत्पादकता की ओर	ज्योति शुन्थवाल, देवेन्द्र सिंह एवं सुजोय खन्ना	45
25.	बछड़ों में होने वाली ग्रासनली की खांच की निष्क्रियता: दुष्प्रभाव एवं प्रबंधन	पार्थ देसाई, सरिता देवी एवं चित्रा चौहान	47

प्रकाशकः

डॉ. वी.एस. पंवार

निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय

हिसार–125004 (हरियाणा)

सम्पादकः

डॉ. देवेन्द्र सिंह

सम्पादकीय मण्डलः

डॉ. वन्दना भनोट

डॉ. दिपिन चन्द्र यादव

डॉ. राजेश कुमार

प्रकाशकः डॉ॰ वी॰एस॰ पंवार, निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय, लाला लाजपतराय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार ने डॉ॰ देवेन्द्र सिंह के संपादन में **डोरेक्स ऑफसैट प्रिन्टर्स, हिसार** से लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार के लिए मुद्रित करवा कर जुलाई, 2023 को प्रकाशित किया।

निर्देशः इस पत्रिका में प्रकाशित सामग्री वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित है तथा लेखकों द्वारा पाठकों की जानकारी के लिए प्रस्तुत की गई हैं। सम्पादक, प्रकाशक व मुद्रक तथा लेखकों के द्वारा दी गई जानकारी के लिए उत्तरदायी नहीं हैं। ब्राँडेड दवाइयों व उत्पादों के नाम केवल उदाहरण के रूप में दिए हैं तथा इन्हें विश्वविद्यालय की ओर से सिफारिश न माना जाए। पाठकों को यह सलाह दी जाती है कि किसी भी जानकारी को प्रयोग में लाते समय विशेषज्ञों की सलाह लें। किसी भी त्रुटि के लिए सम्पादक से सम्पर्क किया जा सकता है। सभी विवादों का न्यायक्षेत्र हिसार न्यायालय होगा।

कुक्कुट उत्पादन के संबंध में नैतिकता

स्मृति शर्मा[1], रविंदर[2] एवं पार्थ गौर[1]

[1]पशु आनुवंशिकी और प्रजनन विभाग, [2]पशु पोषण विभाग,

लाला लाजपत राय पशुचिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

परिचय

व्यवहार: व्यवहार उसकी आनुवंशिक संरचना का उत्पाद है, वह वातावरण जिसमें पक्षी कार्य करता है और पक्षी का अनुभव (अर्थात् उसने अपने पिछले आनुवंशिक × पर्यावरण संपर्क को देखते हुए क्या सीखा है?)।

एथोलॉजी: एथोलॉजी प्राकृतिक पर्यावरण के संदर्भ में जानवरों या पक्षियों के व्यवहार का अध्ययन है।

इन्द्रियाँ: पक्षी में दृष्टि और श्रवण सबसे अधिक विकसित इन्द्रियां हैं। वे शिकारियों के लिए सामाजिक व्यवहार, संचार और प्रतिक्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। रासायनिक ज्ञान भी महत्वपूर्ण हैं।

दृष्टि: पक्षियों में दृष्टि की अच्छी तरह से विकसित भावना होती है। सिर और मस्तिष्क के आकार की तुलना में आँखें बड़ी होती हैं। चिकन ऑप्टिक तंत्रिका में ऑप्टिक फाइबर की संख्या मनुष्य की तुलना में 2.5 गुना है। आँखों की कक्षाओं में आँखों की स्थिति चिकन को लगभग 300 डिग्री का दृश्य क्षेत्र देती हैं। पक्षी अपने सिर और गर्दन को हिलाकर चलती हुई वस्तुओं का अनुसरण कर सकते हैं। मुर्गे और टर्की में वर्ण दृष्टि होती है।

श्रवण: बाहरी कान के अस्पष्ट होने के बावजूद पक्षियों में सुनने की क्षमता बहुत अच्छी तरह से विकसित होती है। वे उतने ही संवेदनशील हैं जितने कि मनुष्य सहित स्तनधारी। जंगली और कुक्कुट दोनों पक्षियों के बीच 'कॉल' के महत्व को देखते हुए यह आश्चर्य की बात नहीं है (उदाहरण के लिए जंगली क्षेत्रों में पक्षी और मातृ कॉल और दोहराए जाने वाले दोहन से आकर्षित होने वाले 'शिशु' चूजे)।

रासायनिक इन्द्रियाँ: एक जानवर की रसायनों का पता लगाने की क्षमता को निम्नलिखित में विभाजित किया गया है: स्वाद, घ्राण या गंध और ट्राइजेमिनल केमोरेसेप्शन या केमेस्थेसिस (त्वचा और श्लेष्म झिल्ली की रासायनिक संवेदनशीलता)।

पोल्ट्री में नैतिक पहलू

दृष्टि और अन्य विशेष इन्द्रियाँ

मुर्गियों के पास लगभग 300 डिग्री की पैनोरमिक दृष्टि है, और 26 डिग्री की संभावित दूरबीन दृष्टि है। दृष्टि एक तीव्र इन्द्री है और रंग दृष्टि महत्वपूर्ण है। वरीयता शायद उन रंगों के लिए है जो हरे रंग की पृष्ठभूमि के खिलाफ देखने में सबसे आसान हैं, और रंग में भेदभाव करने की यह क्षमता अनजान है। भोजन का चयन दृश्य संकेतों और तत्काल स्वाद संकेतों पर आधारित होता है। पोल्ट्री और उनके भोजन का प्रबंधन करते समय यह जानना महत्वपूर्ण है। यदि अनाज की उपलब्धता के कारण भोजन की संरचना बदल जाती है, तो मुर्गियाँ आसानी से एक अलग आकार या रंग के बीज खाने के लिए नहीं बदल सकती हैं। मुर्गियों में श्रवण एक तीव्र भावना है, और पक्षियों के झुंडों के भीतर और बीच संचार मुख्य रूप से आसन, प्रदर्शन और स्वरों द्वारा प्रदान किए गए संकेतों के माध्यम से होता है। खतरे और समर्पण का संकेत देने के लिए मुद्राओं और प्रदर्शनों का उपयोग किया जाता है। वोकलिजेशन की किस्में चेतावनी और शिकारी अलार्म कश्वल की श्रेणियों में हैंय संपर्क कॉलय प्रादेशिक कॉलय बिछाने और घोंसले के शिकार कॉलय सुबह की प्रार्थना की लिए बुलानाय धमकी भरे कॉलय विनम्र कॉलय संकट, अलार्म या डर कॉलय संतोष कॉलय और भोजन कॉल।

सामाजिक संगठन, प्रभुत्व पदानुक्रम और नेतृत्व

सघन रूप से रखे गए मुर्गियों के लिए तीन सामान्य प्रकार की पति प्रणालियों का उपयोग किया जाता है:

पिंजरा: मुर्गियों को पिंजरों में 3-10 पक्षियों के समूह में 350-600 वर्ग सेमी प्रति के स्थान भत्ते के साथ रखा जाता है।

मीट चिकन शेड: इनमें 10,000-70,000 मीट बर्ड्स होते हैं, जो अर्ध-बंद या पर्यावरण की दृष्टि से बंद घरों में कूड़े पर रखे जाते

हैं। स्टॉकिंग घनत्व प्रति वर्ग मीटर 30–50 किलोग्राम लाइव वजन से भिन्न होता है।

ब्रीडर शेड: ये घर कूड़े या तार पर अर्ध–संलग्न या संलग्न आवास में हजारों की संख्या में आते हैं। नर से मादा का अनुपात लगभग 1 से 8–15 है, जिसमें प्रति पक्षी 0.2–0.3 वर्ग मीटर का स्थान भत्ता है।

व्यवहार के प्रकार

यौन व्यवहार: नर द्वारा शुरू किए गए उत्तेजना–प्रतिक्रिया अनुक्रम के आधार पर संभोग से पहले प्रदर्शनों की एक शृंखला होती है। नर प्रेमालाप प्रदर्शन आम तौर पर विस्तृत होते हैं, जिसमें मुखरता और शोर, आसन, स्पष्ट आकार बढ़ाने के लिए पंखों को फैलाना और पंखों की विशेषताओं पर जोर देना शामिल होता है। संभोग के प्रबंधन में यौन व्यवहार और प्रभुत्व संबंध महत्वपूर्ण हैं क्योंकि मादा को नर में प्रेमालाप व्यवहार को उजागर करने के लिए झुकना चाहिए और यह भी एक विनम्र व्यवहार है, उच्च–दर्जे वाली मादा का समागम अक्सर मुश्किल होता है।

मातृ–संतान व्यवहार: मातृ व्यवहार या ब्रूडनेस को व्यावसायिक बिछाने के तनाव से चुना गया है, इसलिए यह गहन कुक्कुट पालन प्रणालियों में महत्वपूर्ण नहीं है।

धूल स्नान: धूल स्नान में व्यवहार संबंधी घटकों का एक क्रम शामिल होता है। सबसे पहले, पक्षी संभावित धूल स्नान स्थान को चोंच मारता है और खरोंचता है और फिर एक जगह पर बैठ जाता है और अपने शरीर के चारों ओर ढीले सब्सट्रेट कणों को इकट्ठा करना शुरू कर देता है। बैठे हुए, पक्षी अपने पंखों को हवा में कणों को फैलाने और उन्हें अपने पंखों पर बसने देने के लिए फड़फड़ाता है। फिर वह लेट जाता है, अपनी गर्दन और शरीर के किनारों को सब्सट्रेट पर रगड़ता है और अंत में कणों को हटाने के लिए खुद को हिलाता है। यह बाहरी परजीवियों को दूर करता है और पंखों की स्थिति में सुधार करता है। कई आंतरिक और बाहरी कारक हैं, जिनमें प्रकाश, सब्सट्रेट, परजीवियों की उपस्थिति, गर्मी और आनंद शामिल हैं, जो धूल से स्नान करते हैं।

घोंसला बनाना: यह व्यवहार ओविपोजिशन से पहले होता है और इसमें अंडे देने के लिए पर्याप्त जगह की तलाश होती है। मुर्गियाँ तेजी से घोंसले के बक्से में आती और बाहर आती हैं, या कूड़े पर अपना घोंसला बनाती हैं। बिछाने के समय, मुर्गी घोंसले में प्रवेश करती है और वहीं रहती है। यह मुख्य रूप से आंतरिक प्रेरणा वाला एक प्राकृतिक व्यवहार है।

संचलन गतिविधियाँ: कई प्रजातियाँ विभिन्न गतिविधियाँ प्रदर्शित करती हैं जैसे खेलना, चलना, अंगों को फैलाना, मुड़ना, खड़े होना और सामान्य रूप से लेटना, कल्याण के लिए अत्यधिक लाभकारी हैं। गतिविधि और हरकत अशांति और आक्रामकता के साथ–साथ भय और तनाव को कम करते हैं।

स्क्रैचिंग: स्क्रैचिंग का व्यवहार तब व्यक्त किया जाता है। जब पक्षी पीछे की ओर अपने पैरों से कूड़े को खरोंचता है और भोजन की तलाश में कूड़े को चोंच मारता है।

आक्रामक व्यवहार: कुंठित या भयभीत होने पर मुर्गियां नकारात्मक व्यवहार भी व्यक्त कर सकती हैं, जो उनके कल्याण के लिए हानिकारक है। भय प्रतिक्रियाएँ सतर्कता की हल्की स्थिति से लेकर अत्यधिक घबराहट तक होती हैं, जिसमें व्यवहार पीड़ा और कल्याण हानि का संकेत देता है। नरभक्षण एक हानिकारक व्यवहार है जिससे पक्षियों को दर्द और चोट लगती है। हल्की और छोटी मुर्गियाँ इस आक्रामक व्यवहार से अधिक प्रभावित होती हैं।

असामान्य व्यवहार

1. कभी–कभी नर अन्य नरों का शिकार करते हैं, जो एक समस्या हो सकती है।
2. पिंजरे में बंद पक्षी कुछ असामान्य व्यवहार प्रदर्शित कर सकते हैं जैसे कि सिर हिलाना और पंख चोंच मारना, यानी अन्य पक्षियों के पंखों को चोंच मारना और खींचना।
3. उच्च श्रेणी के पुरुषों और निम्न श्रेणी के पुरुषों के साथ–साथ मुर्गियों के झुंड में छद्म–संभोग सबसे अधिक बार होता है।

तनाव कम करने के लिए वैकल्पिक पशुपालन प्रणाली

वाणिज्यिक अंडे की परतें ज्यादातर पिंजरों में 3–10 के समूह में रखी जाती हैं, जिसमें पक्षी की आवाजाही पर बहुत अधिक प्रतिबंध होता है। मांस मुर्गियों को या तो अर्ध–बंद या पर्यावरण की दृष्टि से बंद घरों में रखा जाता है, अक्सर 70,000 पक्षियों के समूह में। मुर्गियाँ मोटे आयताकार जाल और छिद्रित स्टील शीट के ऊपर ठीक हेक्सागोनल जाल (पक्षी के पैर का समर्थन) का चयन करती हैं। डीप लिटर के साथ फ्री–रेंज सिस्टम, बिना रेंज के डीप लिटर और बैटरी केज। अंडे का उत्पादन पिंजरों में अधिक किफायती

पाया गया है (यानी, प्रति अंडा कम फीड) लेकिन घोंसले के चयन और अंडे देने के व्यवहार के दौरान संघर्ष और हताशा का अधिक व्यवहार दिखाया गया है।

कुक्कुट कल्याण

OIE मानता है कि अच्छे पशु कल्याण के लिए रोग की रोकथाम और पशु चिकित्सा उपचार, उचित आश्रय, प्रबंधन, पोषण, मानवीय प्रबंधन और मानवीय वध/हत्या की आवश्यकता होती है। एफएओ महत्वपूर्ण मानता है कि पक्षियों को स्वस्थ, आरामदायक, अच्छी तरह से पोषित और सुरक्षित होना चाहिए। यह सुझाव दिया जाता है कि फार्म किए गए जानवरों या पक्षियों को चलने-फिरने की पांच बुनियादी 'स्वतंत्रताएं' होनी चाहिए, जैसे कि खिंचाव की आजादी और मुड़ने की आजादी। पाँच स्वतंत्रताएँ जो सभी फार्म बर्ड्स के पास होनी चाहिए-

- भूख और प्यास से मुक्ति।
- बेचैनी से मुक्ति।
- दर्द, चोट और बीमारी से मुक्ति।
- सामान्य व्यवहार व्यक्त करने की स्वतंत्रता।
- भय और संकट से मुक्ति।

OIE उन्हें पशु कल्याण को नियंत्रित करने वाले मार्गदर्शक सिद्धांतों में से एक के रूप में स्वीकार करता है।

निष्कर्ष: पोल्ट्री व्यवहार एक विशेष क्षण में उनकी कल्याणकारी स्थिति का प्रतिबिंब है और यह आंतरिक (शारीरिक) और बाहरी (पर्यावरणीय) कारकों से संबंधित है। कई प्राकृतिक व्यवहार जो कल्याण के पक्ष में हैं, साथ ही अवांछनीय व्यवहार, पर्यावरण संवर्धन से प्रेरित हो सकते हैं। व्यवहार अभिव्यक्तियों की सही व्याख्या बेहतर मूल्यांकन में मदद करती है और उच्च उत्पादकता के लिए सुधार की संभावना एक आराध्य गति से बढ़ जाती है। पक्षियों पर तनाव कम करने के लिए कुक्कुट कल्याण को ध्यान में रखा जाना चाहिए ताकि वे अपनी अधिकतम क्षमता तक उत्पादन कर सकें।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

प्रमुख गतिविधियाँ

1. पशुपालक प्रशिक्षण कार्यक्रम
2. पशुपालक कॉल सेन्टर (930-000-0857)
3. निःशुल्क SMS सेवा
4. पशु पालन सम्बंधी पाठ्य सामग्री
   (पशुधन ज्ञान, डेयरी फ़ार्मिंग मार्गदर्शिका, कैसे करें पशुपालन, मुर्गीपालन मार्गदर्शिका इत्यादि)

पशुपालन में पशु आहार जांच का महत्त्व

ज्योति शुन्थवाल, देवेन्द्र सिंह एवं राहुल यादव*
हरियाणा पशु विज्ञान केंद्र, महेंद्रगढ़
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

पशुपालन हमारे देश में एक प्रमुख रोजगार का जरिया है। पशुपालन हमारे देश की अर्थव्यवस्था का एक अहम् हिस्सा हैं। देश में पशुधन की संख्या पूरे विश्व में सबसे अधिक हैं परन्तु प्रति पशुधन उत्पादकता वैश्विक स्तर पर बहुत कम हैं। इसका एक प्रमुख कारण पशु को वैज्ञानिक पद्धति से पशु आहार उपलब्ध नहीं होना है। हमारे देश में अधिक जनसंख्या व सीमित कृषि होने के कारण पशुओं के लिए आहार की कमी रहती हैं। देश में औसतन पशुधन हेतु सूखे चारे की कमी लगभग 23% और हरे चारे की कमी 63% के लगभग हैं। ऐसे में पशु को संतुलित आहार उपलब्ध करना पशुपालकों के लिए आज के समय में मुश्किल हैं जिसका सीधा नुकसान पशुओं के उत्पादन पर पड़ता हैं। पशु आहार डेयरी उत्पादन, भेड़ बकरी उत्पादन, पोल्ट्री उत्पादन, शूकर उत्पादन आदि सभी में सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। पशु का शरीर 75% जल, 20% प्रोटीन, 5% खनिज पदार्थों एवं 1% से भी कम कार्बोहैड्रेड का बना होता है। शरीर की संरचना पर आयु व पोषण का बहुत प्रभाव होता है। दुधारू पशु के प्रजनन और दूध उत्पादन के लिए उर्जा और प्रोटीन के अतिरिक्त खनिज तत्वों का विशेष महत्व है। कैल्शियम, फास्फोरस, मैग्नीशियम, सोडियम, क्लोराइड मुख्य खनिज तत्व है। कोबाल्ट, आयरन, मैंगनीज, आयोडीन, सेलेनियम, जिंक, कॉपर, क्रोमियम, सूक्ष्म खनिज है अर्थात् इनकी आवश्यकता बहुत कम केवल मिलीग्राम प्रति किलो खनिज मिश्रण ही होती है। पशु को संतुलित आहार की अनुपलब्धता एवं समुचित पोषण ना होने के कारण पशु की उत्पादकता में वांछित सफलता नहीं मिल पाती हैं। पशुओं में संतुलित शारीरिक विकास एवं उत्पादन क्षमता के लिए उनके आहार में खनिज, प्रोटीन, वसा, विटामिन्स आदि सम्पूर्ण मात्रा में जरूरी हैं। पशुपालन में 60-70% खर्च पशु पोषण में ही आता हैं। अत: पशुपालक को समुचित पशुआहार का चुनाव जरूरी हैं। वैज्ञानिक ढंग से पशु आहार संगठन से पशु आहार की लागत व लाभ के अंतराल को कम किया जा सकता हैं।

पशु आहार जांच का महत्त्व-

वर्तमान समय में पशु आहार घटक जैसे खली व दाने के बढ़ते मूल्य के कारण सही लागत पर दूध उत्पादन करना एक चुनौती हैं। जलवायु परिवर्तन की चुनौती भी पशु आहार उत्पादन में बड़ी बाधा हैं। अत: पशुपालक ऐसे समय में अगर वैज्ञानिक ढंग से पशु उत्पादकता के अनुसार आहार तैयार करे तो इस चुनौती से काफी हद तक लड़ा जा सकता हैं। संतुलित आहार खिलाने से पशु उत्पादन क्षमता में 30-35% तक की वृद्धि होती है। वैज्ञानिक ढंग से संतुलित पशु आहार तैयार करने हेतु पशुपालक को सबसे प्रथम ये जानकारी होनी चाहिए की पशु की उत्पादन क्षमता क्या हैं व इस उत्पादन क्षमता को बनाये रखने के लिए पशु को कितनी मात्रा में पोषक तत्वों की आवश्यकता हैं। इसके बाद पशुपालक को विभिन्न पशु आहार घटकों में कितनी मात्रा में विभिन्न पोषक तत्व मौजूद हैं, की जानकारी होनी चाहिए। अंत में इन सभी जानकारियों का इस्तेमाल करके एक संतुलित आहार बनाने के लिए विभिन्न घटकों की मात्रा तय की जाती हैं, जिन्हें मिला कर संतुलित आहार तैयार किया जाता हैं। पशु आहार के विभिन्न घटकों में मौजूद पोषक तत्वों की मात्रा जानने हेतु पशुपालक पशु आहार जांच लैब में पशु आहार की जांच कराये। पशु आहार जांच से पशुपालक पशु आहार में मौजूद प्रोटीन, वसा, उर्जा, खनिज आदि की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं जो संतुलित पशु आहार को बनाने हेतु अत्यंत जरूरी होता हैं।

पशुआहार जांच लैब की मदद से पशुपालक ना सिर्फ पशुआहार के पोषक तत्वों की मात्रा की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं बल्कि साथ ही असंतुलित पशु आहार की जानकारी भी प्राप्त कर सकते हैं जिससे पशुओं में असंतुलित पोषण की वजह से होने वाली बिमारी से भी बचा जा सकता हैं। कई बार पशु आहार में टोक्सिन की मात्रा होने के कारण पशुओं में पाचन सम्बन्धी बिमारी हो सकती हैं, जिस वजह से पशु उत्पादन में भारी कमी आ जाती हैं, इससे बचने के लिए पशुपालक पशु आहार की समय पर जांच करा सकते हैं।

पोल्ट्री उत्पादन में पोल्ट्री आहार में मौजूद टोक्सिन अत्यधिक हानिकारक साबित होते हैं जिससे बचने के लिए पोल्ट्री फार्मर पशु आहार जांच लैब में पोल्ट्री आहार की जांच करा सकते हैं। कई बार पशु को दूषित पानी पिलाने की वजह से पशु में अनेक बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं, इसलिए पशुपालक को समय-समय पर पानी की जांच लैब से करनी चाहिए। पशु आहार में खनिज तत्व, मुख्य व सूक्ष्म तत्व दोनों की पर्याप्त मात्रा होना जरूरी हैं, अत: पशुपालक पशु आहार में इनकी पर्याप्त मात्रा जानने के लिए पशु आहार जांच लैब में जांच करा सकते हैं।

गुणकारी दलहनी चारे के लिए बरसीम की खेती

सतपाल
चारा अनुभाग, अनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, हरियाणा

बरसीम एक वार्षिक एवं दलहनी चारे की फसल है। इसकी खेती ज्यादातर सिंचित उपोष्णकटिबंधीय जलवायु क्षेत्रों में भैंस व अन्य जानवरों के चारे के लिए की जाती है। यह प्राचीन मिस्र में एक महत्वपूर्ण फसल थी। बरसीम उन्नीसवीं सदी की शुरूआत में भारत आयी थी। सर्दियों में हरे चारे के रूप में बरसीम का एक महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि पशु आहार की दृष्टि से यह बहुत ही गुणकारी चारा माना जाता है। बरसीम के चारे में 18-22 प्रतिशत प्रोटीन की मात्रा होती है। बरसीम की एक विशेषता यह भी है कि इस फसल की कई बार कटाइयां ली जा सकती है और नवम्बर से मई तक इसका हरा चारा उपलब्ध रहता है। यह औसतन 20 किलोग्राम नत्रजन प्रति एकड़ प्रस्थापित करके भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाती है। इसलिए बरसीम की खेती को वैज्ञानिक पद्धति से उगाना अति आवश्यक है ताकि इसकी ज्यादा पैदावार ली जा सके। बरसीम के हरे चारे को सूखाकर उत्कृष्ट 'हे' में परिवर्तित किया जा सकता है।

उन्नत किस्में:

1. **मैस्कावी:** यह बरसीम की पुरानी किस्म है और लगभग सारे उत्तर भारत में प्रचलित है। यह किस्म जल्दी फुटाव लेने वाली है तथा नवम्बर से मई तक 4-5 अच्छी कटाइयां दे देती है। इसकी औसत पैदावार 620-680 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है।

2. **हिसार बरसीम 1:** यह बरसीम की उन्नत किस्म है जिसकी हरियाणा प्रदेश में काश्त के लिए सिफारिश की गई है। यह किस्म मैस्कावी के मुकाबले अधिक पत्तेदार, जल्दी बढ़वार एवं अच्छी गुणवत्ता वाली और 8-10 दिन अधिक हरी रहने वाली किस्म है। यह किस्म 700-740 क्विंटल प्रति हैक्टेयर हरा चारा और 90-100 क्विंटल प्रति हैक्टेयर शुष्क चारा देती है। यह किस्म तना गलन एवं जड़ गलन रोगों की प्रतिरोधी है।

3. **हिसार बरसीम 2:** यह बरसीम की नई उन्नत किस्म है जिसकी हरियाणा प्रदेश में काश्त के लिए सिफारिश की गई है। यह किस्म मैस्कावी व हिसार बरसीम 1 के मुकाबले अधिक पत्तेदार, जल्दी बढ़वार एवं अच्छी गुणवत्ता वाली व अधिक दिन हरी रहने वाली किस्म है। यह किस्म 780-800 क्विंटल प्रति हैक्टेयर हरा चारा और 100-110 क्विंटल प्रति हैक्टेयर शुष्क चारा देती है। यह किस्म तना गलन एवं जड़ गलन रोगों के प्रति जयादा प्रतिरोधी है।

4. **जवाहर बरसीम-1 (जेबी-1):** बरसीम की यह किस्म संपूर्ण भारत के लिए अनुशंसित की गई है। हरे चारे की औसत पैदावार 700-750 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है।

5. **जवाहर बरसीम 05-9 (जेबी 05-9):** बरसीम की यह नई उन्नत किस्म भारत के उत्तर-पश्चिम क्षेत्र (राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड) के लिए अनुशंसित की गई है। इसकी हरे चारे की औसत पैदावार 650 से 680 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है। यह तना गलन एवं जड़ गलन रोगों की प्रतिरोधी है। चैंपा (एफिड) हमले के लिए कम से कम संवेदनशील है।

6. **बी एल 42:** बरसीम की यह किस्म संपूर्ण भारत के लिए अनुशंसित की गई है। हरे चारे की औसत पैदावार 700-750 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है। यह किस्म तना गलन रोग की प्रतिरोधी है।

7. **बी एल 45:** बरसीम की यह किस्म जम्मू और कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ के लिए अनुशंसित की गई है। हरे चारे की औसत पैदावार 700-750 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है। यह किस्म तना गलन रोग की प्रतिरोधी है।

8. **बुंदेल बरसीम-7 (जेएचबी 18-1):** बरसीम की यह किस्म पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, केंद्र शासित प्रदेश जम्मू और कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ और महाराष्ट्र के लिए अनुशंसित की गई है। हरे चारे की औसत पैदावार 620-650 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है। यह किस्म तना गलन रोग की प्रतिरोधी है।

9. **बुंदेल बरसीम-8 (जेएचबी 18-2):** बरसीम की यह किस्म पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, केंद्र शासित प्रदेश जम्मू और कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ और महाराष्ट्र के लिए अनुशंसित की गई है। हरे चारे की औसत पैदावार 610-640 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है। यह किस्म तना गलन रोग की प्रतिरोधी है।

मिट्टी: मध्यम से भारी मिट्टी बरसीम की फसल के लिए उपयुक्त होती है। यह फसल लवण सहनशील भी है और इसे हल्की खारी जमीन में भी उगाया जा सकता है। हल्की व रेतीली मिट्टी में बरसीम को नहीं लगाना चाहिए।

बिजाई का समय: बरसीम की फसल के लिए सितम्बर के आखिरी सप्ताह से लेकर अक्तूबर का पूरा महीना सर्वोतम माना गया है। पछेती बिजाई करने पर इसके हरे चारे की पैदावार कम हो जाती है इसलिए इसकी समय पर बिजाई कर देनी चाहिए।

बरसीम का टीकाकरण: बरसीम की अधिक बढ़वार व पैदावार लेने हेतू इसके बीज को एक खास किस्म के जीवाणुओं राइज़ोबियम कल्चर से बिजाई से पहले टीकाकरण करना चाहिए।

टीकाकरण के लिए 50 ग्राम गुड़ को आधे लीटर पानी में घोल लें। एक एकड़ के बीज (8-10 किलो) को फर्श पर डालकर ऊपर से गुड़ का घोल डाले और साथ में एक पैकेट कल्चर भी छिड़क दें। अब बीज को हाथ से अच्छी तरह मिला दें ताकि हर बीज पर जीवाणु चिपक जाए। राइजोबियम के इस टीके को गुड़ के घोल में भी मिला सकते हैं। उपचार के बाद बीज को छाया में सुखाकर खेत में बिजाई कर दें।

बीज की मात्रा व बिजाई: एक एकड़ खेत के लिए 8-10 किलो बीज को एक प्रतिशत नमक के घोल में डालकर रखना चाहिए ताकि हल्के बीज व 'कासनी' खरपतवार के बीजों को बरसीम से अलग किया जा सके।

पहली कटाई से अधिक तथा उत्तम किस्म का हरा चारा लेने के लिए बरसीम को जापानी सरसों या चाइनीज़ कैबेज के साथ मिलाकर बोना चाहिए। मिश्रित फसल में बरसीम के 8 किलो बीज के अतिरिक्त 500 ग्राम जापानी सरसों या चाइनीज़ कैबेज बीज एक एकड़ के लिए काफी हैं। बरसीम को छिड़का विधि द्वारा बोया जाता है।

खाद की मात्रा: बरसीम फसल में 10 किलो नाइट्रोजन व 28 किलो फास्फोरस प्रति एकड़ के हिसाब से बिजाई से पहले डालनी चाहिए। बाद में बरसीम खुद ही वातावरण से नाइट्रोजन लेती रहती हैं।

सिंचाइयां: बरसीम में पहली सिंचाई बहुत महत्वपूर्ण है अतः यह जल्दी ही कर देनी चाहिए। हल्की मिट्टी में प्रथम सिंचाई बिजाई के 3-5 दिन में तथा भारी मिट्टी में 8-10 दिन बाद अवश्य कर देनी चाहिए क्योंकि प्रथम सिंचाई का बरसीम की बढ़वार में विशेष योगदान होता है। अन्य सिंचाइयां मौसम के अनुसार 15-20 दिनों के अन्तराल पर करनी चाहिए। अधिक तापमान पर अक्तूबर में भी सिंचाइयां 10-15 दिन के अन्तराल पर करनी चाहिए। बरसीम में नमी की कमी बिल्कुल भी नहीं होनी चाहिए क्योंकि पानी की कमी का सीधा असर हरे चारे की पैदावार पर पड़ता है।

कटाइयां: बरसीम की फसल 60 दिन के बाद पहली कटाई के लिए तैयार हो जाती है। इसके बाद की कटाइयां 40 दिनों के अंतराल पर सर्दियों में तथा 30 दिन के अंतराल पर बंसत के दिनों में करें। इस प्रकार से बरसीम में 5-6 कटाइयां ली जा सकती है।

बीज तैयार करना: बीज तैयार करने के लिए बरसीम से कासनी तथा अन्य अवांछित पौधों को निकाल देना चाहिए। 25 मार्च के आसपास अन्तिम कटाई लेने के बाद एक सिंचाई तुरन्त कर देनी चाहिए। दूसरी सिंचाई 20 दिन बाद कर देनी चाहिए। बरसीम का बीज मई के अन्त में पक कर तैयार होता है और इसकी पैदावार लगभग 2 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

बकरी प्रजननः कृत्रिम गर्भाधान का आगमन और उसकी महत्वपूर्ण भूमिका

ज्ञान सिंह[1] एवं अमित कुमार[2]

[1]पशु चिकित्सा क्लिनिक परिसर,
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार
[2]भाअनुप-भारतीय कृषि जैवप्रौधोगिकी संस्थान, गढ़खटंगा, रिंग रोड, रांची

परिचय

कृत्रिम गर्भाधान (एआई) के आगमन के साथ बकरी प्रजनन के क्षेत्र में परिवर्तनकारी बदलाव आ रहा है। यह अभूतपूर्व तकनीक वैज्ञानिक बकरी प्रजनन में एक नए युग की शुरूआत कर रही है, जो आनुवंशिक लक्षणों को बढ़ाने और बकरी आबादी में बेहतर गुणों के प्रसार को सुनिश्चित करने के लिए संभावनाओं की एक बड़ी पेशकश कर रही है। बकरी प्रजनन के पारंपरिक तरीके अक्सर आनुवंशिक विविधता और नियंत्रित संभोग के मामले में चुनौतियां पैदा करते हैं। हालाँकि, एआई उच्च प्रदर्शन वाले नर से वीर्य के सावधानीपूर्वक चयन के माध्यम से संभोग के लिए एक नियंत्रित और सटीक तंत्र प्रदान करके इन सीमाओं को पार करता है। कृत्रिम गर्भाधान (एआई) एक अच्छी तरह से स्थापित विधि है जिसमें एआई गन जैसे विशेष उपकरणों का उपयोग करके महिला प्रजनन पथ में उच्च गुणवत्ता वाले नर पशु शुक्राणु को जानबूझकर शामिल किया जाता है।

यह सदियों पुरानी तकनीक सहायक प्रजनन प्रौद्योगिकी (एआरटी) का सबसे पुराना और सबसे व्यापक रूप से उपयोग किया जाने वाला रूप है, जो वैश्विक आनुवंशिक वृद्धि प्रयासों को चलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जबकि एआई उल्लेखनीय लाभ प्रदान करता है, इसकी प्रभावकारिता सीमित पुरुष उपलब्धता, कम आनुवंशिक विविधता, आनुवंशिक विसंगतियों के संभावित संचरण और इनब्रीडिंग के बढ़ते जोखिम से उत्पन्न चुनौतियों से संतुलित होती है, जो मातृ लक्षणों को प्रभावित कर सकती है। बेहतर आनुवंशिक रूप से सम्पन्न पुरुषों के लिए वीर्य संरक्षण तकनीकों, जैसे चिलिंग या क्रायोप्रिजर्वेशन का एकीकरण, प्रजनन कार्यक्रमों के भीतर एआई की प्रभावशीलता और अनुकूलन क्षमता को बढ़ाता है।

बकरियों में कृत्रिम गर्भाधान (एआई) के लाभ

1. **आनुवंशिक सुधारः** एआई प्रजनकों को दुनिया में कहीं भी स्थित श्रेष्ठ नस्लों से उच्च गुणवत्ता वाली आनुवंशिक सामग्री तक पहुंचने की अनुमति देता है। इससे दूध उत्पादन में वृद्धि, बेहतर मांस की गुणवत्ता, बेहतर रोग प्रतिरोधक क्षमता और उन्नत प्रजनन प्रदर्शन जैसे वांछनीय लक्षणों के तेजी से प्रसार की सुविधा मिलती है। एआई विशिष्ट प्रजनन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए आनुवंशिकी के सटीक चयन को सक्षम बनाता है, जिससे बकरी के झुंड के भीतर त्वरित आनुवंशिक प्रगति होती है।

बकरी में कृत्रिम गर्भाधान का प्रदर्शन

2. **रोग नियंत्रणः** एआई संभोग के लिए एक नियंत्रित और जैव सुरक्षित वातावरण प्रदान करता है, जिससे प्राकृतिक संभोग के दौरान होने वाली संक्रामक बीमारियों के फैलने का खतरा कम हो जाता है। यह झुंड के स्वास्थ्य को बनाए रखने और बीमारियों के प्रसार को रोकने में मदद करता है, समग्र झुंड जैव सुरक्षा में योगदान देता है।

3. **अंत:प्रजनन में कमीः** जीन पूल में बढ़ोतरी करके और आनुवांशिक विविधता को पेश करके, एआई अंत:प्रजनन की संभावना को कम कर देता है, जिससे विभिन्न आनुवंशिक असामान्यताएं हो सकती हैं और समग्र झुंड प्रदर्शन कम हो

सकता है। एआई के माध्यम से नियंत्रित संभोग प्रजनकों को जानवरों की आनुवंशिकता का सावधानीपूर्वक प्रबंधन और निगरानी करने की अनुमति देता है।

4. **अधिकतम प्रजनन क्षमता:** एआई मादा बकरी के प्रजनन चक्र के आधार पर गर्भाधान के सटीक समय को सक्षम बनाता है, जिससे सफल गर्भधारण की संभावना बढ़ जाती है। इससे गर्भधारण की दर अधिक हो सकती है और बच्चों का अधिक समकालिक मौसम हो सकता है, जिसके परिणामस्वरूप झुंड प्रबंधन में सुधार होगा और अधिक समान बच्चे का उत्पादन होगा।

5. **विशिष्ट जेनेटिक्स तक पहुंच:** एआई छोटे पैमाने के प्रजनकों को विशिष्ट लोगों से आनुवंशिक सामग्री तक पहुंचने में सक्षम बनाता है जो अन्यथा अनुपलब्ध या वित्तीय रूप से निषेधात्मक हो सकता है। आनुवंशिक संसाधनों का यह लोकतंत्रीकरण संचालन के विभिन्न पैमानों पर बकरी की नस्लों में सुधार की अनुमति देता है।

6. **भौगोलिक लचीलापन:** एआई भौगोलिक सीमाओं को पार करता है, जिससे प्रजनकों को जानवरों के परिवहन की आवश्यकता के बिना दूर के स्थानों से वीर्य का उपयोग करने की अनुमति मिलती है। यह विशेष रूप से देशी या दुर्लभ बकरी नस्लों के संरक्षण और सुधार के लिए फायदेमंद है जो भौगोलिक रूप से अलग-थलग हो सकती हैं।

7. **समय और श्रम दक्षता:** एआई प्राकृतिक संभोग के लिए खेत पर बड़ी संख्या में पुरुषों को रखने की आवश्यकता को कम करता है, जिससे श्रम, स्थान और संसाधनों की बचत होती है। इससे अधिक कुशल झुंड प्रबंधन हो सकता है और परिचालन लागत कम हो सकती है।

8. **बेहतर रिकॉर्ड-कीपिंग:** एआई को मद चक्र, गर्भाधान तिथियों और आनुवंशिक वंशावली पर नजर रखने के लिए सटीक रिकॉर्ड-कीपिंग की आवश्यकता होती है। यह उन्नत दस्तावेजीकरण सूचित प्रजनन निर्णय लेने और झुंड के प्रदर्शन को अनुकूलित करने के लिए मूल्यवान डेटा प्रदान करता है।

9. **बढ़ी हुई झुंड उत्पादकता:** बेहतर आनुवंशिकी के लक्षित चयन के माध्यम से, एआई बेहतर विकास दर, उच्च दूध की पैदावार और बेहतर समग्र उत्पादकता के साथ बकरियों के उत्पादन में योगदान देता है। इससे बकरी उत्पादकों को आर्थिक लाभ होता है।

10. **संगति और पूर्वानुमेयता:** एआई प्रजनकों को अधिक सुसंगत और पूर्वानुमानित प्रजनन परिणाम प्राप्त करने की अनुमति देता है, क्योंकि नर की गुणवत्ता, आनुवंशिकी और समय जैसे कारकों को सावधानीपूर्वक नियंत्रित किया जा सकता है। इससे अधिक समान बच्चों के बैच, आसान प्रबंधन और बेहतर विपणन अवसर प्राप्त होते हैं।

निष्कर्ष:

अंत में, कृत्रिम गर्भाधान की शुरूआत बकरी प्रजनन में एक आदर्श बदलाव का प्रतीक है, जो आनुवंशिक सुधार और झुंड प्रबंधन के परिदृश्य को नया आकार देने का वादा करती है। भौगोलिक सीमाओं को पार करने, आनुवंशिक प्रगति में तेजी लाने और रोग नियंत्रण को बढ़ाने की अपनी क्षमता के साथ, एआई में बकरी पालन की उत्पादकता, गुणवत्ता और स्थिरता को बढ़ाने की अपार संभावनाएं हैं।

930-000-0857

whatsapp

लुवास पशुपालक हेल्पलाइन नम्बर

हाइब्रिड नापियर घास- पशुओं के लिए उत्तम हरा चारा विकल्प

ज्योति शुन्थवाल, देवेन्द्र सिंह एवं राहुल यादव

हरियाणा पशु विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़, हरियाणा

हाइब्रिड नेपियर घास से पशुपालक कम निवेश में पूरा साल हरा चारा पा सकते है जो पशुओं के चारे के लिए एक अच्छा विकल्प साबित हो सकता है। पशुपोषण की आवश्यकताओं की पूर्ति करने तथा दुग्ध उत्पादन की लागत को कम करने में हरे चारे का एक विशेष महत्व है। वर्तमान में हरे चारे की माँग एवं आपूर्ति के इस अन्तर को कम करने के लिए, चारा उत्पादन की लागत को कम करने तथा वर्षभर हरे चारे की उपलब्धता बनाये रखने के लिये पारम्परिक चारा फसलों के साथ-साथ बहुवर्षीय हरे चारे की खेती भी करना आवश्यक है। संकर नेपियर घास की खेती इस क्रम में पशुपालकों के लिए एक अच्छा विकल्प है, जिससे अन्य हरा चारा फसलों की अपेक्षा कई गुना हरा चारा प्राप्त किया जा सकता हैं। साथ ही इसकी खेती से 4-5 वर्षो तक बुवाई पर होने वाले व्यय की भी बचत होती है। यह एक तेजी से वृद्धि करने वाली फसल हैं, साथ ही एक बार कटाई के बाद शीघ्र पुनर्वृद्धि करता हैं, साथ ही यह प्रति हेक्टेयर 2000 से 2500 क्विंटल प्रति वर्ष तक हरा चारा उत्पादन देने में सक्षम है। तकरीबन 40-45 दिनों में ये 4-5 फीट ऊँची हो जाती है तथा इस अवस्था पर इसका पूरा तना व पत्तियां हरे रहते हैं जिसके कारण यह रसीली तथा सुपाच्य होती है और पशु इसे बड़े चाव से खाते हैं। हाइब्रिड नेपियर में कुल क्रूड प्रोटीन 9-14% के करीब व कैल्शियम 0.88%, फोस्फौरस 0.24%, पाचकता 58% तक होती हैं।

नेपियर घास की खेती के लिए जरूरी बातें

दिसम्बर व जनवरी माह को छोड़कर शेष महीनों में तीव्र वृद्धि करती है। खेती के लिये बलुई दोमट से बलुई मृदायें जिनमें सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था हो अच्छी रहती है। संकर नेपियर घास 5.0 से 8.0 तक पी.एच. को सहन करने की क्षमता रखती है।

इसके लिये एक गहरी जुताई हैरो या मिट्टी पलट हल से तथा 2-3 जुताई कल्टीवेटर से करके रिज मेकर से 60 सेमी. से 100 सेमी. की दूरी पर मेढ़ बना लेते है। मेढ़ों की ऊँचाई लगभग 25 सेमी. रखते हैं। यदि सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था हो, तो इसका रोपण 15 फरवरी से सितम्बर माह के अन्त तक किया जा सकता है अन्यथा बरसात के महीनों में इसका रोपण करें। खाद एवं उर्वरक प्रबन्धन-बहुवर्षीय फसल होने के कारण खेत की तैयारी के समय 250 कुव गोबर की खाद, 75 किग्रा. नत्रजन, 50 किग्रा. फास्फोरस तथा 40 किग्रा. पोटाश प्रति हैक्टेअर का प्रयोग करना चाहिये। रोपण के 30 दिन बाद 75 किग्रा. नत्रजन तथा इसके पश्चात् प्रत्येक कटाई के बाद 75 किग्रा. नत्रजन प्रति हैक्टेअर की दर से प्रयोग करना चाहिए। 60 से 100 सेमी. की दूरी पर 25 से.मी. ऊँची बनी मेढ़ों पर मेढ़ के दोनों तरफ दो तिहाई ऊँचाई पर जिग-जैग रूप से संकर नेपियर घास की जड़ों या तने की कटिंग को 60 सेमी. की दूरी पर लगाकर, आधार पर अच्छी तरह दबा देते हैं। कटिंग को थोड़ा तिरछा करके इस प्रकार लगाते है कि कटे भाग को सीधी धूप से बचाया जा सके। रोपण के तुरन्त बाद खेत में पानी लगा देते है। कटिंग लगाने के लिये 3-4 माह पुराने तनों का चुनाव करना चाहिए। तने की कटिंग इस प्रकार तैयार करते हैं कि उसमें दो गाँठ हों। एक गाँठ को मिट्टी में दबा देते हैं तथा दूसरी गाँठ को ऊपर रखते हैं।

नेपियर घास की खेती के लिए खरपतवार प्रबन्धन

रोपण के 30 दिन के भीतर मेढ़ां पर से निराई गुड़ाई करके घास निकाल देनी चाहिए तथा बीच के स्थान पर कस्सी द्वारा खुदाई करके खरपतवार प्रबन्धन करना चाहिए। इसी समय खाली स्थानों पर नई कटिंग लगाकर गैप फिलिंग भी कर देनी चाहिए।

नेपियर घास की खेती के लिए सिंचाई प्रबन्धन

पहली सिंचाई रोपण के तुरन्त बाद तथा इसके तीन दिन पश्चात् दूसरी सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। इसके पश्चात् मौसम के अनुसार 7-12 दिन पर अथवा आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें।

नेपियर घास की खेती के लिए कटाई एवं उपज

संकर नेपियर घास की पहली कटाई 60-70 दिन पश्चात् तथा इसके बाद फसल की बढ़वार अनुसार 40-45 दिन (4-5 फीट ऊँचाई होने पर) के अन्तराल पर भूमि की सतह से मिलाकर करनी चाहिए। वर्षभर में इसकी 6-7 कटाई से 2000-2500 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक हरे चारे की उपज प्राप्त होती है। इसके साथ बीच के खाली स्थान में मौसम अनुसार लोबिया या बरसीम की अन्तः फसली खेती करके अधिक उत्पादन, उत्तम गुणवत्ता का हरा चारा प्राप्त करने के साथ-साथ मृदा की उत्पादकता को भी बनाये रखा जा सकता हैं।

मवेशियों में कीटोसिस- कारण, निदान और उपचार

विपिन चन्द्रा एवं रोहिताश कुमार

पीजीआईविईआर, जयपुर

कीटोसिस पशु के ब्याने के बाद कुछ दिनों से लेकर कुछ सप्ताह में होता है। इसमें रक्त में ग्लूकोज की कमी एवं कीटोन बॉडीज की अधिकता तथा मूत्र में कीटोन बॉडीज का उत्सर्जन होता है जिसके फलस्वरूप शरीर का वजन कम हो जाता है। दुग्ध उत्पादन भी कम हो जाता है। इसके कारण अक्सर दूध उत्पादक और प्रजनन में हानि भी हो जाती है। इसके अलावा किसान को वित्तीय नुकसान झेलना परता है, जो की उनके उपचार में और बढ़ जाती है। किटोसिस के मामले ज्यादातर उच्च उत्पादन वाली डेयरी गायों में होता है। केटोसिस में शरीर में कार्बोहाइड्रेट व वोलेटाइल फैटी एसिडस के मेटाबोलिज्म में गड़बड़ी से उत्पन्न होती है। कार्बोहाइड्रेट के पाचन व वितरण में असंतुलन से ही यह रोग होता है। शरीर की स्थिति का आकलन और शरीर के ऊपर बसा परत की मोटाई की निगरानी, रुमेन की गतिविधि एवं केटोसिस होने के कारणों का नियंत्रण केटोसिस निगरानी के लिए सबसे अधिक इस्तेमाल किया जाने वाला तरीके है।

गाय ऊर्जा चयापचय:

गाय के आहार में काफी मात्रा में संरचनात्मक कार्बोहाइड्रेट (सेल्यूलोज, हेमिकेलुलोज और पेक्टिन) और आरक्षित कार्बोहाइड्रेट (स्टार्च और अन्य पानी में घुलनशील कार्बोहाइड्रेट) होते हैं। इन सभी कार्बोहाइड्रेट में से लगभग 90 रेटिकुलोरुमेन में मौजूद माइक्रोबायोटा (जीवाणु) द्वारा निष्पादित फर्मन्टेशन प्रक्रियाओं द्वारा पचाया जाता है। रुमैन में कार्बोहाइड्रेट के फर्मन्टेशन के कारन एसिटिक प्रोपियोनिक और ब्यूटिरिक एसिड (सबसे प्रचुर मात्रा में) के साथ-साथ मीथेन और कार्बन डाइऑक्साइड का उत्पादन होआ है। एसिटिक एसिड ऊर्जा स्रोत के रूप में तथा वसा उतपादन में उपयोग किया जा सकता है। फिर भी इसका मुख्य काम दूध वसा का उतपादन करना है। एसिटिक एसिड साथ आहार के साथ दिया जाये तो ये दूध की वसा सामग्री को बढ़ाता है। प्रोपियोनिक एसिड ग्लूकोज का निर्माण करता है, जिसे ऊर्जा स्रोत के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। ब्यूटिरिक एसिड ज्यादातर ऊर्जा स्रोत के रूप में, या दूध वसा के निर्माण में इस्तेमाल किया जा सकता है।

कारण:

यह रोग प्राय: ब्याने के बाद उन गायों में होता है जिनकी उत्पादन क्षमता अधिक होती है। अत: उन्हें आहार भी अधिक दिया जाता है और पशु पूरे दिन घर में बंधे रहते हैं अर्थात् व्यायाम नहीं मिलता है या चरने बाहर नहीं जाते हैं। कीटोसिस की संभावना तीसरे व उसके बाद के ब्यांत में अधिक होती है। जब उनके दूध उत्पादन की क्षमता अपने चरम पे होता है तब शरीर में ग्लूकोज की उपलब्धता काम हो जाती है। जिसके कारन से वसा का उपयोग अधिक होने लगता है तथा कीटोन बॉडीज का निर्माण ज्यादा होने लगता है। खून के जांच में कीटोन बॉडीज बढ़ा हुआ तथा ग्लूकोज घटा हुआ दिखता है। इस प्रकार के केटोसिस को प्राथमिक कीटोसिस कहा जाता है।

कभी-कभी गर्भावस्था के दौरान अंतिम महीनों में भी हो सकता है। क्योंकि उस समय वसा अत्यधिक तेजी से ऊर्जा प्रदान करने के लिए उपयोग होता है। इसके परिणामस्वरूप ग्लूकोज के निर्माण में बाधा उत्पन होती है तथा शरीर को इंसुलिन के लिए प्रतिरोधी बनाता है, जिससे ग्लूकोज का उपयोग बाधित होता है। इस प्रकार के कीटोसिस का विकास गाय को सूखा अवधि के दौरान अधिक खिलाने से होता है। खून के जांच में कीटोन बॉडीज बढ़ा हुआ तथा ग्लूकोज घटा हुआ दिखता है।

देसी नस्लों की गायों में कीटॉसिस नहीं के बराबर होता है परंतु संकर नस्ल के पशुओं में अधिक पाया जाता है। यह रोग शरीर में कार्बोहाइड्रेट के मेटाबोलिजम में गड़बड़ी से कार्बोहाइड्रेट की कमी से हाइपोग्लाइसीमिया होने के कारण होता है। गर्मी में पशु को अधिकतर कम मात्रा व कम गुणवत्ता वाला चारा मिलता है ऐसे में शरीर की आवश्यक क्रियाओं के संचालन हेतु वसा का प्रयोग अधिक होता है जिससे कीटोन बॉडीज बनते हैं और पशु कोकीटॉसिस हो जाता है। बरसात एवं सर्दी में पशु को अधिक मात्रा व अधिक गुणवत्ता वाला चारा दाना खाने को मिलता है। इससे दुग्ध उत्पादन बढ़ने से पशु पर तनाव बढ़ जाता है और कीटॉसिस हो जाता है। यदि ब्याने के बाद पशु को कम मात्रा में व

कम गुणवत्ता वाला चारा दाना दिया जाए तो भूख के कारण कार्बोहाइड्रेट व चर्बी या वसा की मेटाबॉलिज्म में गड़बड़ से ब्याने के बाद कीटॉसिस हो जाता है। उपनैदानिक कीटोसिस में किसी बीमारी या अन्य कारणों से जानवर कम खाता है तथा प्रभावित जानवर कंसन्ट्रेट का सेवन कम कर देते हैं और हरा चारा का विकल्प चुनते हैं।

यदि ब्याने के बाद पशु मेट्राइटिस, मैस्टाइटिस, दर्द या अन्य कारणों से कम खाता है। भले ही उत्तम गुणवत्ता का अधिक चारा दाना भी रखा जाए तो भी पशु नहीं खाता है जिससे कीटॉसिस हो जाता है। कभी-कभी कीटॉसिस और मिल्क फीवर अर्थात् दुग्ध ज्वर साथ-साथ हो जाते हैं।

लक्षण :

अधिकतर पशुओं में यही अवस्था पाई जाती है जिसमें पशु का पाचन तंत्र का कार्य अनियंत्रित, दुग्ध उत्पादन में कमी तथा अवसाद होना। पशु घास भूसा तो खाता है लेकिन दाना नहीं खाता है, परंतु कुछ दिनों बाद तो किसी भी प्रकार का आहार एवं पानी नहीं लेता है। इसी के साथ पाइका के कारण पशु अखाद्य चीजें खाने की चाह रखता है। पशु का वजन अचानक कम हो जाता है तथा चमड़ी के नीचे की चर्बी काफी कम हो जाने से पशु काफी कमजोर दिखाई देता है। दूध में भी अचानक भारी कमी हो जाती है, पशु सुस्त एवं चल फिर भी नहीं पाता है। कठोर मिंगनी के रूप में म्यूकस से लिपटा हुआ गोबर आता है। शरीर का तापमान, नाड़ी की गति तथा स्वसन सामान्य होता है। कीटोन बॉडीज की मीठी सिरके जैसी विशेष गंध स्वास, दूध एवं मूत्र से आती है। आंखें सिकुड़ जाती हैं और फिर सिर थोड़ा नीचे रखकर एक ही तरफ रहता है। योनि मार्ग से श्राव निकलता है।

पशु पैरों को क्रास करते हुए गोलाकार घूमता है जो इसका विशिष्ट लक्षण है। पशु सिर दीवार पर दबाता है अथवा नीचे लटका रहता है। पशु बिना उद्देश्य इधर-उधर चलता है ऐसा लगता है जैसे वह अंधा हो गया हो। पशु बार-बार त्वचा व अन्य अखाद्य वस्तुओं को चाटता है। अधिक लार के साथ पशु मुंह से चबाने जैसी आवाज करता है। पशु में टिटनेस के दौरे के लक्षण नजर आते हैं जिससे पशु को शारीरिक चोट भी लग सकती है। स्नायुविक लक्षण लगभग 1 घंटे तक रहते हैं तथा आँठ-दस घंटे बाद फिर से प्रकट होते हैं।

निदान:

खून, दुध तथा मूत्र में कीटोन बॉडीज की जांच की जाती है। दूध तथा मूत्र में परीक्षण भी किया जाता है जो की भी काफी सटीक होते हैं और यह बहुत ही आसान होता है। इसे किसान खुद इस्तेमाल कर सकते है। इस परीक्षण में डिपस्टिक को दूध तथा मूत्र में डुबाते है तथा डिपस्टिक का रंग बदलने का इंतेजार करते हैं। आमतौर पर यह प्रतिक्रिया 1-2 मिनट हो जाता है। डिपस्टिक के रंग को उसके डब्बे पर अंकित रंग से मिलाते है।

उपचार:

- ❖ उपचार का मुख्य उद्देश्य रक्त में शर्करा का स्तर बराबर करना ताकि कीटोन बॉडीज का सामान्य उपयोग हो सके और वह दूध या मूत्र में नहीं निकलें।
- ❖ डेक्सट्रोज 25 इंजेक्शन की 500 से 1000 एम एल इंट्रावेनस विधि से दे इसके पश्चात् रक्त में ग्लूकोज का स्तर सामान्य बना रहे इसके लिए पशु को कुछ दिनों तक गुड़ खिलाते रहे।
- ❖ इंजेक्शन बेटामेथासोन या डेक्सामे थासोन काफी लाभदायक होते हैं। 80 एमजी इंट्रावेनस या इंटरमस्कुलर विधि से दें यदि 1 दिन से आराम नहीं होता है तो दूसरे दिन भी लगाएं।
- ❖ सोडियम प्रोपियोनेट 100 से 200 ग्राम प्रतिदिन कम से कम 3 दिन तक खिलाएं।

रोकथाम:

- गर्भावस्था के दौरान अधिक वसा वाला आहार खिलाकर उसको मोटा नहीं बनने देना चाहिए।
- गर्भित गाय भैंस को भूखा नहीं रखना चाहिए। उन्हें संतुलित आहार देना चाहिए।
- गर्भित गाय भैंस के आहार में खनिज लवण अवश्य देवें।

गर्भावस्था के दौरान मक्का एवं गुड़ जैसे आहार भी देना चाहिए क्योंकि यह आसानी से पचते हैं और रक्त में ग्लूकोज के स्तर को सामान्य बनाए रखते हैं।

समेकित कृषि प्रणाली अपनायें: दुगुना मुनाफा पायें

कमलदीप[1] , अनिका मलिक[2] एवं आरजू[3]

[1]पशु आनुवांशिकी व प्रजनन विभाग, [2]पशु चिकित्सा एवं पशुपालन विस्तार शिक्षा विभाग,
[3]बागवानी विभाग, [1,2]लाला लाजपत राय पशुचिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार
[3]चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

समेकित कृषि प्रणाली क्या है?

समेकित कृषि प्रणाली खेती की आधुनिक तकनीक है। यह खेती के दो या दो से अधिक घटकों का न्यायिक मिश्रण है। इस तकनीक में खेती के साथ-साथ बागवानी, पशुपालन, कुक्कुट पालन, मुर्गीपालन, मधुमक्खी पालन, रेशम, सब्जी-फल, मशरूम ,मत्स्य पालनको बढ़ावा दिया जाता है। इन सब का पालन एक साथ एक ही जमीन पर करते हैं और 5 गुना तक ज्यादा फायदा कमा सकते हैं। इसे एकीकृत कृषि प्रणाली के नाम से भी जाना जाता है। अंग्रेजी में इसे इंटेग्रेटेड फार्मिंग के नाम से जाना जाता है। इसमे खेती के सभी घटकों को शामिल किया जाता है। जिससे किसान अपनी एक फसल पर निर्भरता कम कर अथवा उसके घाटे की संभावनाओं को भी कम कर सकते हैं और सालभर आमदनी ले सकते है। दरअसल एकीकृत कृषि प्रणाली का मूल यह है कि एक किसान की जमीन का अदिकतम इस्तमाल किया जा सके।

क्या आवश्यकता है?

भारत में निरंतर कृषि योग्य भूमि के औसत आकार में गिरावट आ रही है, जो एक खतरे का संकेत है और छोट किसान खेती से होने वाले आय से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर पाने में असमर्थ हैं। आकड़ों के अनुसार भारत की आधी से ज्यादा जनसख्या निर्धन है, बल्कि यह स्थिति दिन-प्रतिदिन गंभीर होती जा रही है। आज जलवायु परिवर्तन बहुत तेजी से हो रहा है और साथ ही उर्वरक, सिंचाई और विद्युत के दरों में वृद्धि ने कृषि पर होने वाले खर्च में वृद्धि की है। एक तरफ प्राकृतिक संसाधनों की कमी और वहीं दूसरी तरफ जनसंख्या वृद्धि की वजह से प्रति व्यक्ति कृषि योग्य भूमि में गिरावट आ रही हैं, जिससे भूमि के क्षेत्रफल में वृद्धि की संभावना नगण्य जिसके के कारण किसानों को भी अपने तरीके और तकनीक दोनों में बदलाव करने की

आवश्यकता है। इसी कारण समेकित कृषि प्रणाली को अपना कर किसान अपने आर्थिक स्तर को ऊँचा उठा सकते है और भविष्य को सुनहरा बना सकते है।

समेकित कृषि के फायदे:

1. समेकित कृषि प्रणाली से हम पर्यावरण को हो रहे नुकसान पर बहुत हद तक काबू पा सकते हैं।
2. लागत कम और मुनाफा अधिक कर सकते हैं।
3. उर्वरकों और चारे के अत्यधिक खर्चे को भी कम कर सकते हैं। जिससे हमारी लागत कम और मुनाफा अधिक होगा।
4. सबसे बड़ी बात यह है कि समेकित कृषि हमें आश्वस्त

करती है उन खर्चों और भविष्य के नुकसान से भी क्योंकि हम पहले से ही उनसे निपटने का इंतेजाम कर लेते हैं।

5. समेकित कृषि एक किसान को समृद्धि मिलती है और वह इतना काबिल बनता है कि वो दूसरों कोरोजगार दे सके।
6. पशु के गोबर को खाद के रूप में प्रयोग कर सकते हैं।
7. सालभर आमदनी मिलती है।
8. लोगों का जीवन स्तर बढ़ता है।
9. जमीन उपजाऊ होती है।
10. मिट्टी क्षरण को रोका जा सकता है।

एकीकृत कृषि प्रणाली किसानों के लिए बहुत लाभकारी है। इस विधि से कम लागत में ज्यादा मुनाफा कमाया जा सकता है। इसमें आय के साथ–साथ रोजगार के अवसर भी बढ़ते हैं।

शाश्वत पशुधन उत्पादन

अनिका मलिक[1], कमलदीप[2] एवं आरजू[3]

[1]पशु चिकित्सा एवं पशुपालन विस्तार शिक्षा विभाग, [2]पशु आनुवांशिकी व प्रजनन विभाग
[3]बागवानी विभाग, [1,2]लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशुविज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार
[3]चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

शाश्वत पशुधन उत्पादन की क्या आवश्यकता है ?

बढ़ती अधिक शहरी और समृद्ध आबादी को खिलाने के लिए विशेष रूप से पशुधन क्षेत्र में 70 प्रतिशत उत्पादन में वृद्धि होनी चाहिए। इसके अलावा इस तरह के विकास और खाद्य उत्पादन में वृद्धि भविष्य की पीढ़ियों की खुद की कीमत पर नहीं होनी चाहिए। नतीजतन पशुधन प्रणालियों की दीर्घ कालिक व्यवहार्यता पर अब सवाल उठाया जा रहा है। टिकाऊ पशुधन प्रणालियों के लिए अब एक मजबूत सामाजिक मांग है।

शाश्वत पशुधन उत्पादन

- शाश्वत पशुधन प्रणाली वास्तव में पर्यावरण के अनुकूल, किसानों के लिए आर्थिक रूप से व्यवहार्य और सामाजिक रूप से स्वीकार्य होनी चाहिए, विशेष रूप से पशुकल्याण के लिए।
- स्तत पशुधन उत्पादन का अर्थ है पशुधन प्रणालियों को आर्थिक रूप से अधिक कुशल बनाना और पशु–मूल उत्पादों की बढ़ती मांग को पूरा करने और पशुधन क्षेत्र से नकारात्मक दुष्प्रभावों और बाह्यताओं को कम करने के बीच संतुलन बनाना।

शाश्वत पशुधन उत्पादन प्राप्त करने के तरीके और साधन किसान क्या कर सकता है ?

- अपने पशु का समय पर टीकाकरण करवाएं।
- अपने पशुओं को संतुलित आहार दें।
- अपने जानवरों को बाहरी रागाहों पर चराएं।
- अपने पशुओं को खनिज मिश्रण खिलाएं।
- एकीकृत फसल पशुधन प्रणाली को अपनाएं।
- जैविक पशुधन प्रणाली को बढ़ावा दें।
- पशुओं के उपचार के लिए एंटीबायोटिक दवाओं का उपयोग कम करें।
- फसल और पशुधन दोनों की उत्पादकता में सुधार की कोशिश करें।
- पशुओं पर नियमित निगरानी रखें।
- अपने पशुओं को बायपास वसा खिलाएं।

- पशुओं के गोबर का उपयोग खाद के रूप में करें।
- चारा सुरक्षा/चारा प्रौद्योगिकियों का उपयोग करें।

बकरी पालन के लाभ

प्रिया[1], रचना शर्मा एवं प्रियंका दुग्गल

[1]पशुधन उत्पादन प्रबंधन विभाग

गुरु अंगद देव वैटरनरी एवं एनिमल साइंसेज यूनिवर्सिटी, लुधियाना (पंजाब)

पशुपालन किसान की आय का प्रमुख स्रोत है और बकरी पालन एक ऐसा व्यवसाय है जिसको कम लागत लगाकर शुरू किया जा सकता है। बकरी को गरीब की गाय भी कहा जाता है। बकरी पालन का रुझान सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े एवं भूमिहीन किसानों के तरफ तेजी से बढ़ रहा है। आज के समय में युवा भी बकरी पालन की तरफ आकर्षित हो रहे हैं। बकरी पालन अगर वैज्ञानिक तरीके से किया जाए तो अधिक मुनाफा कमाया जा सकता है। बकरी और उसके उत्पादों की उच्च मांग एवं आर्थिक लाभ के संभावना कई प्रगतिशील किसानों और शिक्षित युवा पीढ़ी की बकरी पालन को व्यावसायिक स्तर पर अपने के लिए प्रेरित करते हैं।

बकरी पालन के लाभ

बकरी पालन का उद्देश्य दूध और मांस प्राप्त करने के साथ-साथ बकरी की खाल, बाल और रेशों का भी व्यावसायिक महत्व है। हमारे देश में आज के समय में बकरियां करोड़ों लोगों की जीविका का आधार है। देश के विभिन्न भागों की अलग-अलग जलवायु में बकरी जैसा छोटा पशु आसानी से पाला जा सकता है। इसके पालन में किसी विशेष प्रकार के आहार की आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि बकरी एक ऐसे जानवर की श्रेणी में आता है जो लगभग हर प्रकार की घास को खाकर आसानी से बचा सकती है। बकरियों की मुख्य विशेषता यह है कि मनुष्य और अन्य पशुओं के लिए गैर उपयोगी पदार्थ को बहुत उपयोगी उत्पादों में जैसे कि दूध, मांस और दूसरे उत्पाद जैसे रेशा, बाल, खाल आदि में बदलने में समर्थ है। बकरी के दूध में औषधीय गुण होते हैं क्योंकि यह विभिन्न प्रकार की घास, झाड़ियां (बबूल, बेरी) वृक्षों की पत्तियां जैसे कि बरगद, पीपल, गूलर, शहतूत, कटहल, जामुन, महुआ आदि और वृक्षों की सूखी फलियां जैसे कि देसी बबूल, शुबबुल आदि खाती हैं। बकरी का दूध और मांस आसानी से पचने योग्य होता है क्योंकि यह कोलेस्ट्रॉल मुक्त होता है।

1. **रखरखाव में आसानी और पूंजी :** महिलाएं और बच्चे बकरियों के छोटे आकार के कारण आसानी से पाल सकते हैं। एक सफल बकरी पालक होने के लिए कुछ आम कामों को करने की आवश्यकता होती है जैसे कि जरूरत के अनुसार खिलाना और देखभाल करना। इन कार्यों में अधिक उपकरण पूंजी, श्रम या कड़ी मेहनत की आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि बकरी पालन व्यवसाय बहुत लाभदायक है। इसलिए कई सरकारी और गैर सरकारी बैंक इस व्यवसाय को शुरू करने के लिए ऋण भी दे रहे हैं।

2. **कम जगह की आवश्यकता:** बकरियों को उनके छोटे शरीर के आकार के कारण रहने के लिए एक बड़े क्षेत्र की आवश्यकता नहीं होती है। उन्हें आसानी से अपने घर पर अपने अन्य पशुओं के साथ रखा जा सकता है। इसके अलावा बकरियां अन्य घरेलू पशुओं के साथ मिश्रित खेती के लिए भी बहुत उपयुक्त हैं।

3. **अच्छे प्रजनक:** बकरियां उत्कृष्ट प्रजनक होती हैं। एक बकरी 7 से 12 महीने की उम्र में योन परिपक्वता तक पहुंच जाती है और कम समय में बच्चों को जन्म देती है। इसके अलावा कुछ बकरियों की नस्ल प्रति गर्भावस्था कई बच्चे पैदा करती हैं।

4. **कम जोखिम और संकट :** बकरी पालन के लिए सूखा प्रवण क्षेत्र में भी कम जोखिम और संकट है। यह किसी भी अन्य पशुपालन व्यवसाय में संभव नहीं है। इस संदर्भ में बकरियों से आवश्यकता के अनुसार दूध लिया जा सकता है।

5. **बाजार में समान मूल्य:** नर और मादा बकरियों का बाजार में लगभग बराबर मूल्य होता है। साथ ही बकरी पालन और मांस खाने के खिलाफ कोई धार्मिक वर्जन नहीं है। उनके मांस की स्थानीय और अंतरराष्ट्रीय बाजारों में भारी मांग और उच्च कीमत है। इसलिए व्यावसायिक बकरी पालन ने बेरोजगार लोगों के लिए रोजगार का एक संभावित तरीका विकसित किया है।

6. **अच्छी अनुकूलन क्षमता और कम बीमारियों की संभावना :** बकरियां लगभग सभी प्रकार की जलवायु, वातावरण और परिस्थितियों के साथ खुद को अनुकूल करने में बहुत सक्षम हैं। वे किसी भी अन्य जानवरों की तुलना में गर्म और ठंड वाली जलवायु को अधिक सहन करने में सक्षम हैं। बकरियां में रोग होने की संभावना भी कम होती है।

7. **सर्वश्रेष्ठ दुग्ध उत्पादक :** इनका दूध अन्य पशुओं की तुलना में आम आदमी के लिए सबसे अच्छा दूध माना जाता है। दूध पौष्टिक और आसानी से पचने वाला होता है। दर असल, बच्चों से लेकर बूढ़े तक सभी प्रकार के लोग बकरी के दूध को आसानी से पचा सकते हैं। बकरी का दूध पीने से एलर्जी की समस्या भी कम होती है। यह अस्थमा खांसी आदि से पीड़ित लोगों के लिए आयुर्वेदिक दवा के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। बकरी का दूध शिशुओं के लिए भी सबसे अच्छा होता है क्योंकि छोटे वसा वाले ग्लोबल्स की प्रबलता के कारण तेजी से लाइपेस गतिविधि होती है जिसके परिणाम स्वरुप बकरी का दूध आसानी से पच जाता है।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

पशुपालन सम्बंधी जानकारियाँ पाएँ

निःशुल्क SMS (मैसेज) द्वारा

पंजीकरण हेतु- 930-000-0857

(पशुपालक कॉल सेन्टर)

(सुबह 10 से 1 बजे तक) पर कॉल करें।

दूधारू पशुओं में बेबेसिओसिस रोग (लहू मूतना) के कारण, लक्षण एवं निदान

मनीष शर्मा, बाबू लाल जांगिड़ एवं नीलेश सिंधु

पशु चिकित्सा नैदानिक परिसर, पशु चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय,
लाला लाजपत राय पशुचिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार, हरियाणा

पशुओं में बेबेसिओसिस रोग एक बहुत ही घातक परजीवी रोग है जो पशुओं के रक्त में संक्रमण पैदा करता है। यह रोग मुख्यत: चिचड़, (ब्राउन टिक) के काटने से फैलता है। जब बेबेसिया परजीवी जानवरों के शरीर में प्रवेश करते हैं, तो वे उनकी लाल रक्त कोशिकाओं को नष्ट करते हैं और उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता को प्रभावित करते हैं। इसके फलस्वरूप, जानवरों में खून की कमी (अनीमिया), थकान, तेज बुखार, और अन्य लक्षण दिखाई देते हैं। बेबेसिओसिस रोग का निदान रक्त और सीरम परीक्षण के माध्यम से किया जाता है, जिससे संक्रमण की उपस्थिति और उसकी गुणवत्ता की जांच की जाती है। इस बीमारी का उपचार पशु चिकित्सक के सलाहनुसार उपयुक्त दबाएं रोग ग्रसित पशुओं को देकर किया जाता है।

रोग के कारण

बबेसिओसिस की विभिन्न प्रजातियां जैसे बेबेसिया बोविस, बेबेसिया बाइजेमिना, बेबेसिया डाइवर्जेंस और बेबेसिया मेजर आदि इस रोग के मुखय कारक हैं। ये बीमारी आमतौर पर गौशालाओं और अन्य पशुशालाओं में मौजूद चिचड़ (ब्राउन टिक) द्वारा खून चूसने से फैलती है।

रोग के प्रमुख लक्षण

1. **रक्त की कमी (अनीमिया):** बेबेसिया परजीवी लाल रक्तकोशिकों में प्रवेश करते हैं और उनके अंदर विकसित होते हैं। परजीवी की वृद्धि के परिणामस्वरूप लाल कोशिकाएं टूट जाती हैं।
2. **तापमान में बढ़ोत्तरी:** पशु का तापमान असामान्य तरीके से बढ़ता है और रोगग्रसित पशु को तेज बुखार हो जाता है।
3. **थकान और कमजोरी:** पशु में थकान और कमजोरी की स्थिति पैदा हो जाती है। वे सामान्य से अधिक कमजोर हो सकते हैं।
4. **पेट में दर्द और विकार:** पशु के पेट में दर्द और पाचन संबंधी विकार की संभावना हो सकती है। यह पशु के पाचन तंत्र को प्रभावित कर सकता है और खाने की इच्छा कम कर सकता है।
5. **मूत्र संबंधी समस्याएँ:** बेबेसिया रोग के कारण पशुओं में मूत्र संबंधी समस्याएँ पैदा हो जाती हैं। जैसे कि पेशाब का लाल होना। यह बीमारी अक्सर पशु के उत्सर्जन तंत्र को प्रभावित कर सकती है और मूत्र विसर्जन में असुविधा या अनियमितता का कारण बन सकती है।

रोग का निदान

दूधारू पशुओं में बेबेसिओसिस रोग के निदान के लिए प्रयोगशाला में निम्नलिखित परीक्षणों का उपयोग किया जाता है:

1. **खून की जाँच:** इसमें पशु के खून का नमूना लेकर सूक्ष्मदर्शी परीक्षण द्वारा खून की जाँच और बेबेसिया परजीवी की उपस्थिति की जांच की जाती है। इसके अलावा रक्त कोशिकाओं में होने बाले बदलाव का पता लगाया जाता है।
2. **सीरम की जाँच:** इसमें पशु के सीरम का नमूना लेकर बेबेसिया के खिलाफ एंटीबॉडीज की उपस्थिति की जांच की जाती है। यह परीक्षण शरीरिक रोग प्रतिरोधक क्षमता की जांच करने में मदद करता है और बेबेसिया के संक्रमण की गुणवत्ता का पता लगाता है।
3. **पीसीआर (पोलीमेरेस चेन रिएक्शन) परीक्षण:** इस परीक्षण से बेबेसिया के जीनोम के का पता लगाया जाता है।

रोकथाम तथा नियंत्रण

दूधारू पशुओं में बेबेसिया के संक्रमण की रोकथाम के लिए निम्नलिखित उपायों का पालन करना चाहिए।

1. **इलाज:** संक्रमित पशुओं को पशचिकित्सक द्वारा निर्धारित एंटी-पैरासाइटिक दवाओं से इलाज करवाना चाहिए। इलाज में इमिडोकार्ब डाइप्रोपियेट या डिमिनाजीन एसीटुरेट जैसी

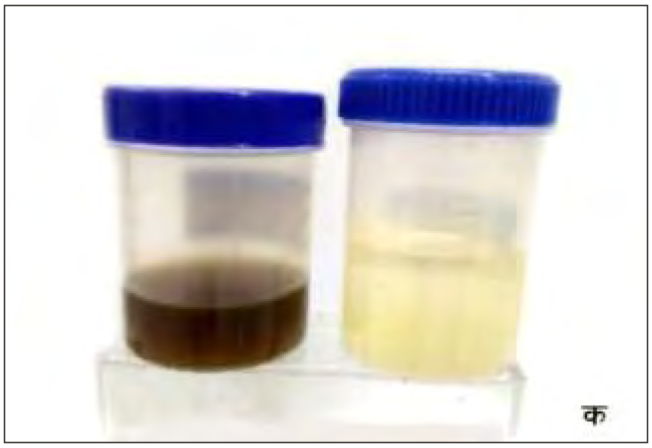

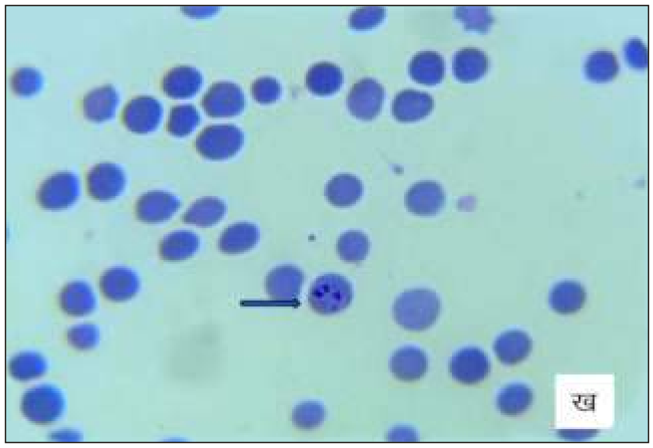

दवाएं शामिल हो सकती हैं, जो निर्दिष्ट बेबेसिया प्रजातियों के अनुसार उपयोग की जाती हैं।

2. **खून की जाँच:** पशुओं के नियमित खून की जाँच से बेबेसिया संक्रमण की पहचान प्रारंभिक स्तर पर हो सकती है। संक्रमित पशुओं को अलग करके और उचित दवाओं से समय पर इलाज करके संक्रमण के प्रसार को रोका जा सकता है।

3. **खून का आधान:** गंभीर मामलों में, जहाँ पशु की अनीमिया काफी गंभीर होता है, रक्त आधान की प्रक्रिया की जा सकती है। इसके द्वारा संक्रमण से प्रभावित खून की कमी को पूरा किया जा सकता है।

4. **चिचड़ के काटने से बचाव (टिक कंट्रोल):** बेबेसिया मुख्य रूप से चिचड़ों के काटने के माध्यम से फैलता है। नियमित टिक जांच, टिक रिपेलेंट के उपयोग से संक्रमण को रोका जा सकता है।

5. **पशुओं का संगरोधन (क्वारंटाइन):** नए पशुओं को मौजूदा झुंड में शामिल करने से पहले क्वारंटाइन किया जाना चाहिए और बेबेसिया संक्रमण की जांच की जानी चाहिए। इससे स्वस्थ पशुओं को संक्रमण के फैलने से बचाया जा सकता है।

6. **नियमित देखभाल:** संक्रमित पशुओं को खून की कमी और कमजोरी जैसे लक्षणों का प्रबंधन करने के लिए नियमित देखभाल की आवश्यकता होती है। पशुओं को चारे के साथ-साथ खनिज लबनों ब मल्टीविटामिन भी नियमित रूप से देने चाहिए।

7. **पर्यावरण प्रबंधन:** पशुओं को साफ और स्वच्छ आवास स्थान पर रखने से बेबेसिया फैलाने वाले चिचड़ों को रोका जा सकता है।

बैकयार्ड मुर्गी पालन के फायदे

पूनम रतवान[1], मनोज कुमार[2], एस.पी. दहिया[3], नवीन कुमार श्योराण[4] एवं विकाश राठी[5]
पशु आनुवंशिकी एवं प्रजनन विभाग,
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार, हरियाणा

भारत में ग्रामीण और भूमिहीन परिवारों के बीच घर के पिछवाड़े या घरेलू (बैकयार्ड) मुर्गीपालन आम है। यह पूरक आय का एक आकर्षक स्रोत है। इसमें कम निवेश करके उच्च आर्थिक रिटर्न मिलता है। बैकयार्ड मुर्गीपालन को महिलाओं, बच्चों और बुजुर्गों द्वारा आसानी से प्रबंधित किया जा सकता है। भारत के ग्रामीण भूमिहीन/वंचित किसानों की पोषण सुरक्षा और आजीविका के उत्थान के लिए बैकयार्ड मुर्गीपालन एक आशाजनक क्षेत्र है। यह रोजगार सृजन और महिला सशक्तिकरण में भी मदद करता है। इस क्षेत्र में प्रगति जैसे नस्लों की उन्नत किस्म, विशेष रूप से पिछवाड़े में मुर्गीपालन उत्पादन के लिए उपयुक्त इनपुट की उपलब्धता, देसी उत्पादों की लगातार बढ़ती मांग के कारण बैकयार्ड मुर्गीपालन का चलन बढ़ रहा है।

बैकयार्ड मुर्गीपालन भारत के गांवों में कई वर्षों से किया जा रहा है। इसलिए कई दशकों पहले आधुनिक मुर्गीपालन को भारत के सभी कृषि जलवायु क्षेत्रों में बैकयार्ड मुर्गीपालन के लिए उपयुक्त उच्च प्रदर्शन करने वाले पक्षियों को विकसित करने के उद्देश्य से शुरू किया गया था। अंततः आईसीएआर ने वर्ष 1999 में एक दोहरे उद्देश्य (अंडा और मांस) वाली नस्ल वनराजा विकसित की और 2015 में भूरे अंडे देने वाली नस्ल ग्रामप्रिया विकसित की गई। इन दोनों नस्लों की सफलता से कई अन्य नस्लों का निर्माण हुआ और देश के ग्रामीण इलाकों में बैकयार्ड मुर्गीपालन को अपनाया गया।

बैकयार्ड मुर्गीपालन में प्रायः 5–20 मुर्गियों का छोटा–सा समूह एक परिवार के द्वारा पाला जाता है, जो घर एवं उसके आस–पास में अनाज के गिरे दाने, झाड़–फूसों के बीच कीड़े–मकोड़े, घास की कोमल पत्तियाँ तथा घर या होटल व ढ़ाबे की जूठन आदि खाकर अपना पेट भरती है। केवल प्रतिकूल परिस्थितयों में निम्न कोटि का थोड़ा–सा अनाज खिलाने की आवश्यकता होती है। इसके रात्रि विश्राम के लिए घर के टूटे–फूटे भाग व खंडहर काम में लाए जा सकते हैं। इस प्रकार घर के रखरखाव एवं खाने–पीने पर कोई खास खर्च नहीं आता है। घर के पिछवाड़े में रखे पक्षियों का मांस और अंडे गरीब परिवारों के लिए प्रोटीन और ऊर्जा का सस्ता और समृद्ध स्रोत हैं। इसलिए ग्रामीण परिवारों के लिए उच्च गुणवत्ता का प्रोटीन स्रोत उपलब्ध हो जाता है एवं कुछ मात्रा में मांस व अंडा बेचने से परिवार को अतिरिक्त आमदनी हो जाती है।

नस्ल का चुनाव

बैकयार्ड मुर्गीपालन के लिए प्रचलित मुख्यः देशी व क्रॉस नस्ले निम्नलिखित हैंः

कड़कनाथः यह नस्ल "कालामासी" के रूप में जानी जाता है जिसका अर्थ है "काले मांस वाला पक्षी" और मध्य प्रदेश इसका मूल स्थान है। कड़कनाथ का मांस दिल की बिमारियों तथा अधिक कोलेस्ट्रॉल को कम करने में मददगार होता है।

असीलः असील का शाब्दिक अर्थ वास्तविक या शुद्ध है। असील अपनी दुस्साहसी, उच्च क्षमता, राजसी चाल के लिए जाना जाता है। आंध्र प्रदेश को इस महत्वपूर्ण नस्ल का घर कहा जाता है।

इसके अलावा क्षेत्र के लोगों की विशिष्ट आवश्यकता के आधार पर बैकयार्ड मुर्गी पालन की मांग को पूरा करने के लिए कई क्रॉस विकसित किए गए है जिसमें से कुछ निम्नलिखित हैं–

वनराजाः ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में खेती के लिए पोल्ट्री अनुसंधान निदेशालय हैदराबाद द्वारा दोहरे उद्देश्य वाली किस्म विकसित की गई है।

ग्रामप्रियाः यह पोल्ट्री अनुसंधान निदेशालय हैदराबाद द्वारा विकसित की गई है। इस पक्षी की एक वर्ष में 230–240 अंडे देने की क्षमता होती है और यह न्यूनतम पूरक आहार के साथ फ्री रेंज परिस्थितियों में 160–180 अंडे दे सकती हैं।

प्रतापधनः इसे एमपीयूएटीए उदयपुर द्वारा पोल्ट्री प्रजनन पर एआईसीआरपी के हिस्से के रूप में विकसित किया गया था। यह राजस्थान के स्थानीय पक्षियों से मिलता जुलता है। इसमें रोग प्रतिरोधक क्षमता अच्छी होती है। इसमें पोषण के निम्न स्तर और

कड़कनाथ

असील

कठोर जलवायु परिस्थितियों में जीवित रहने की क्षमता है।

हिमसमृद्धिः इस नई किस्म को आईसीएआर-पोल्ट्री अनुसंधान निदेशालय, हैदराबाद द्वारा समन्वित पोल्ट्री प्रजनन पर अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना, पालमपुर केंद्र के तहत डेहलेम रेड और देशी पक्षी को क्रॉस करके विकसित किया गया था। इस पक्षी की एक वर्ष में 180 अंडे देने की क्षमता होती है-

कैरी-प्रिया लेयरः इसमें पहला अंडा 17 से 18 सप्ताह में, 150 दिनों में 50% उत्पादन और 26 से 28 सप्ताह में अधिकतम उत्पादन मिलता है।

आहार व्यवस्था - अच्छा उत्पादन एवं अधिक लाभ प्राप्त करने के लिए कुक्कुट पालकों को मुर्गियों के आहार पर ध्यान देना चाहिए। प्रायः देखा गया है कि किसी विशेष मौसम में उत्पादित होने वाला एक विशेष प्रकार का अनाज ही मुर्गियों को खिलाया जाता है, जिससे पक्षियों को आवश्यक पोषक तत्व उचित मात्रा में प्राप्त नहीं होते हैं। अतः पक्षियों को वर्ष के दौरान पैदा होने वाले अनाजों को मिश्रित करके खिलाना चाहिए। यदि सम्भव हो तो सम्पूर्ण आहार के रूप में उन्हें प्रोटीन, खनिज लवण व विटामिन भी देना चाहिए।

प्रजनन व्यवस्था - प्रायः ऐसा देखा जाता है कि एक बार मुर्गी खरीदने के बाद एक झुंड में उन्हीं से बार-बार प्रजनन करवाया जाता है, जिससे इन ब्रीडिंग (अंतः प्रजनन) के दुष्प्रभाव सामने आते है। इससे अण्डों की संख्या निषेचन एवं प्रस्फुटन में कमी आती है तथा बच्चों की मृत्यु दर बढ़ती है। अतः इन्हें प्रतिवर्ष बदल देना चाहिए। इससे अंडा उत्पादन व प्रजनन क्षमता में वृद्धि के साथ-साथ चूजों की मृत्यु दर में कमी आती है।

रोगों से बचाव एवं रोकथाम - मुर्गियों को विभिन्न प्रकार से संक्रामक रोगों से बचाने के लिए कुक्कुट पालकों को मुर्गियों में टीकाकरण अवश्य करा देना चाहिए। बर्ड फ्लू जैसी भयानक बीमारियों से बचने के लिए मुर्गियों को बाहरी पक्षियों/पशुओं के संपर्क से बचाना चाहिए। यदि कोई मुर्गी बीमार होकर मर गई हो तो उसे स्वस्थ पक्षियों से तुरंत अलग कर देना तथा निकटस्थ पशु चिकित्सक से सम्पर्क कर मरी हुई मुर्गी का पोस्टमार्टम करवाकर मृत्यु के सम्भावित कारणों का पता लगाना चाहिए।

मुर्गियों की सुरक्षा के आवश्यक उपाय

1. मुर्गियों को तेज हवा, आंधी, तूफान से बचाना चाहिए।
2. मुर्गियों के आवास का द्वार पूर्व या दक्षिण पूर्व की ओर होना अधिक ठीक रहता है जिससे तेज चलने वाली पिछवा हवा सीधी आवास में न आ सके।
3. आवास के सामने छायादार वृक्ष लगवा देने चाहिए ताकि बाहर निकलने पर मुर्गियों को छाया मिल सके।
4. मुर्गियों का बचाव हिंसक प्राणी कुत्ते, गीदड़, बिलाव, चील आदि से करना चाहिए।
5. आवास का आकार बड़ा होना चाहिए ताकि उसमें पर्याप्त शुद्ध हवा पहुंच सके और सीलन न रहे।
6. बीमार मुर्गियों को अलग कर देना चाहिए।
8. मुर्गी फार्म की मिट्टी समय-समय पर बदलते रहना चाहिए और जिस स्थान पर रोगी कीटाणुओं की संभावना हो वहां से मुर्गियों को हटा देना चाहिए।
9. एक मुर्गी फार्म से दूसरे मुर्गी फार्म में दूरी रहनी चाहिए।

भेड़ एवं बकरियों में रोग निदान के लिए नमूनों का एकत्रीकरण व भेजने की विधि

गौरी चंद्रात्रे[1], पंकज कुमार[1] एवं वंदना भानोट[1]

[1]पशु महामारी विज्ञान विभाग,

लाला लाजपत राय पशुचिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

रोग निदान के लिए नमूनों का एकत्रीकरण और उन्हें भेजने की विधि विभिन्न प्रकार के रोगों और उनके निदान के तरीकों पर निर्भर करती हैं। यहां कुछ सामान्य चरण हैं जो रोग निदान के लिए नमूनों का एकत्रीकरण और भेजने में लिए जाते हैं। इसके बाद हम विशिष्ट रूप से भेड़ एवं बकरियों में नमूनों के एकत्रीकरण के बारे में विस्तृत चर्चा करेंगे:

1. **रोग के प्रकार का निर्धारण:** पहले यह निर्धारित किया जाता है कि किस प्रकार की बीमारी का संभावित निदान है। उदाहरण के लिए, यदि किसी पशु को काफी दिनों से बुखार है तो फिर उसका रक्त या मूत्र परीक्षण किया जा सकता है।

2. **नमूना लेना:** रोग निदान के लिए उपयुक्त नमूना लिया जाता है। यह नमूना रक्त, मूत्र, थूक, टिश्यू नमूना, स्वाब, उल्टा, रीच नमूना आदि हो सकता है।

3. **नमूना संग्रहण:** नमूना संग्रहण के लिए स्टेराइल नमूना संग्रहण उपकरण का उपयोग किया जाता है ताकि किसी भी परिवर्तन से नमूने का प्रभाव न हो।

4. **नमूना परीक्षण:** नमूना को परीक्षण के लिए भेजा जाता है, जैसे कि लैब या परीक्षण केंद्र में। यहां विभिन्न प्रकार के परीक्षण किए जा सकते हैं जैसे कि रोगाणु विश्लेषण, जेनेटिक परीक्षण, रफ्तार का परीक्षण, और अन्य विशेष परीक्षण।

5. **निदान:** परीक्षण के परिणामों के आधार पर, रोग का निदान किया जाता है। निदान के आधार पर उपयुक्त उपचार की निर्धारण किया जाता है।

उचित उपचार के लिए रोग के वास्तविक निदान हेतु बकरियों एवं भेड़ों के शरीर से बीमारी के अनुसार नमूने को एकत्रित कर प्रयोगशाला में परीक्षण कराना आवश्यक हो जाता है। प्रयोगशाला में परीक्षण की सफलता की मुख्य रूप से जाँच हेतु एकत्रित किए गये नमूने का उचित विधि से एकत्रीकरण, उनका संरक्षण तथा समय पर भेजने पर निर्भर करता है।

- रोग की अंतिम एवं अग्रिम अवस्था का नमूना लेना चाहिये।
- नमूना एक से अधिक ग्रसित भेड़ एवं बकरियों से लेना चाहिये।
- तत्काल मरे हुये एवं रोग की विभिन अवस्थाओं से नमूने एकत्रित कराना चाहिये।
- ग्रामीण क्षेत्रों में फैली हुई बीमारी के नैदानिक लक्षणों के आधार पर नमूने लेने चाहिये।
- नमूने किसी भी स्तर पर प्रदूषित नहीं होने चाहिये।

नमूने का विवरण

प्रयोगशाला मे नमूने को भेजते समय निम्न जानकारी देनी चाहिये-

- मालिक का नाम व पता।
- पशु का पूर्ण विवरण (प्रजाति, आयु, रंग, लिंग, टैग/नंबर आदि)
- रोग/महामारी फैलने की अवधि।
- रोग ग्रसित पशुओं की संख्या/दर।
- मृत्यु दर।
- रोग के लक्षण।
- नैदानिक लक्षण।
- लाक्षणिक निदान।
- उपचार का विवरण एवं उनका प्रभाव।
- पशु की मृत्यु व शव परीक्षण का समय।
- शव परीक्षण की रिपोर्ट।
- खिलाये जानेवाले आहार की प्रकृति।
- आहार परिवर्तन का ब्योरा यदि हो।
- निकटस्थ फार्म के पशुओं से संपर्क यदि हुआ है तो।
- आवश्यक विशेष परीक्षण का विवरण।
- नमूने को संरक्षित किये गये प्रिजरवेटिव का विवरण।

- नमूना भेजने वाले पशु चिकित्सक का नाम, पता, दूरभाष व ई–मेल।

भेजे गये नमूनों की त्वरित जाँच के उद्देश्य से पत्र की एक अग्रिम प्रति प्रयोगशाला को डाक या ई-मेल द्वारा तथा अन्य प्रति नमूने/पार्सल के साथ भेजनी चाहिये।

नमूने का एकत्रीकरण ओर भेजने की विधि :-

1. **मल** – इनके नमूने निम्न उद्देश्यों के लिये भेजे जाते हैं–

i) अंत परजीवियों की जाँच।

ii) जोन्स रोग के जीवाणुओ की जाँच।

iii) आंतों से संबधित अन्य रोगों की जाँच।

इसके लिये हाथों मे दस्ताने पहन कर तर्जनी उँगली मे सिप्रिट या एंटिसेप्टिक लगा कर गुदा द्वार मे उँगली डालकर 3–5 मेगनी (मल) निकालकर जिपवाली पालिथीन मे पूर्ण विवरण सहित बर्फ के साथ प्रयोगशाला मे भेजना चाहिए। इसकी जाँच ठंड के मौसम में 18–24 व गर्मी मे 8–12 घंटे के अंदर कर लेनी चाहिए। ज्यादा दूरी होने की स्थिति मे नमूने के पैकेट को किसी नमी रहित डिब्बे मे बर्फ के साथ रखकर प्रयोगशाला तक पहचाना चाहिए। अंडों की जाँच मे भेजे जाने वाले मल में दो बूंदें फार्मलीन डाल देनी चाहिए।

2. **पेशाब**– पेशाब की जाँच मुख्य रूप से वृक्क से सम्बधित रोगों, कीटोसिस, पीलिया व इंटेरोटाक्सिमिया (आंतों का जहर) आदि रोगों हेतु की जाती है। नमूने को एकत्र करने के लिये बाजार मे उपलब्ध प्लास्टिक की शीशियों को साफ कर, उन्हें अच्छी तरह सूखा कर, उसमें 10–20 मि.लि. पेशाब में एक बूँद फार्मलीन डालकर पूर्ण विवरण के साथ प्रयोगशाला में जाँच हेतु भेजना चाहिए।

3. **दूध**– दूध का नमूना बकरियों के थनैला व ब्रूसेलोसिस रोग का पता लगाने के लिये निम्न विधि से एकत्रित किया जाता है।

i) एकत्र करने से पहले हाथ को साबुन व पानी से अच्छी तरह धोकर अंत में जीवाणुनाशक घोल को हाथ में लगा लेना चाहिए।

ii) बकरी के अयन व थन को जीवाणुनाशक घोल से धोकर स्वच्छ कपड़े से अच्छी तरह पोंछ लेना चाहिए।

iii) थन की प्रथम 2–3 धार निकाल लेने के बाद स्टेराइल परखनली में पहले बाए व फिर दाएं अयन का दूध एकत्रित कर उसका शीघ्र परीक्षण कर लेना चाहिए। प्रयोगशाला में भेजने के लिये उसे पैक करके बर्फ में बेचना चाहिए।

iv) एक बकरी के दूध का नमूना लेने के पश्चात दूसरी बकरी के नमूने लेने के लिये पूर्व प्रक्रिया को दोहराना चाहिए।

v) नमूने पर बकरी संख्या व बायां/दायाँ थन लिख देना चाहिए।

4. **रक्त**– रक्त का नमूना निम्न उड़ेश्यों के लिये लिया जाता है।

i) रक्त में आने वाले परिवर्तन।

ii) प्रोटोजोआ परजीवी, जीवाणुओं व विषाणुओं के संक्रमण।

iii) विभिन्न रोगों का पता लगाकर उनकी पुष्टि करना।

iv) बकरियों से रक्त गर्दन के दोनों तरफ स्थित जुगुलर शिरा से स्टेराइज्ड परखनली में स्टेराइज्ड सीरीज व निडिल से एकत्रित करना चाहिए। रक्त को जमने से बचाने के लिये ई .डी.टी.ए. (1–2 मि.ग्राम प्रति लीटर रक्त की दर से) एकत्रित रक्त में डाल देनी चाहिए। रक्त एकत्रित करने से पहले जुगुलर शिरा के क्षेत्र को स्प्रिट से अच्छी तरह साफ कर लेना चाहिए। रक्त लेने के बाद परखनली को दोनों हथेलियों के मध्य घुमाकर रेफ्रीजरेटर मे रख देना चाहिए। रक्त से सीरम एकत्र करने के लिये परखनली को एक डिब्बे मे तिरछा लिटा देना चाहिए। करीब एक घंटे के बाद परखनली से सीरम अलग करके फ्रिज में भंडारण के लिये रख देना चाहिए।

v) सामान्यत: रक्त नमूनों को एकत्र करने के एक घंटे के अंदर जाँच शुरू कर देनी चाहिए, परंतु किसी कारण से जाँच में देर होने की स्थिति में रक्त नमूनों को रेफ्रीजरेटर में 24 घंटों तक रख सकते हैं। रेफ्रीजरेटर में रखे गए रक्त नमूनों की जाँच शुरू करने से आधा घंटा पहले निकाल देना चाहिए ताकि रक्त का नमूना समान्य तापक्रम पर आ जाए। इसके बाद रक्त को धीरे धीरे मिला लेना चाहिए।

vi) रक्त के नमूनों को वायु रोधी बाक्स में रख कर उनके चारों ओर बर्फ रखकर कुछ घंटों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। प्रयोगशाला में जाँच हेतु रक्त के नमूने थर्मस में बर्फ की उपस्थिति में रखकर विशेष वाहक/

डाक/कुरियर के माध्यम से, आवश्यक विवरण के साथ भेजे जा सकते है।

5. **जीवाणु सक्रमण हेतु ऊतकों का नमूना लेना**

i) पशु की मृत्यु के तुरंत बाद एक से दो घंटे के अंदर उत्तकों के नमूने ले लेने चाहिए ताकि द्वितीयक जीवाणु संक्रमण की संभावना न बन सके।

ii) उत्तकों का नमूना लेते समय किसी भी दशा में बाह्य संक्रमण नहीं होना चाहिए।

iii) उत्तकों को आवश्यकतानुसार काटकर स्लाइड पर पतली फिल्म बना लेनी चाहिए।

iv) हृदय से रक्त अन्य शारीरिक द्रव्य, गाढ़ा द्रव्य (नाक/योनि स्त्राव) को पीपेट से खींचकर ट्यूब में रख देना चाहिए।

v) आंतरिक शारीरिक अंगों को साफ चाकू से काटकर एक टुकड़े को ट्यूब/शीशी में रख देना चाहिए।

vi) यकृत, वृक्क, फेफड़े, तिल्ली, लासिका ग्रंथि इत्यादि के ताजे टुकड़ों को खुले मुंह की स्वच्छ बोतलों में रख कर रेफ्रीजरेटर या बर्फ के साथ रखना चाहिए।

vii) किसी जीवित पशु के फोड़े से नमूना लेने के लिये उस क्षेत्र के बालों की अच्छी तरह से सफाई करने के बाद फोड़े को साफ जीवाणु रहित चाकू से खोलकर उसकी दीवार व मध्य के मवाद से फुरहरी नमूना लेकर उसको वायु रोधी स्वच्छ बोतलों में रखकर रेफ्रीजरेटर में रख देना चाहिए।

viii) किसी खुले घाव से नमूना लेने के लिये घाव को गरम पानी व साबुन से अच्छी तरह साफ कर उस पर रुई बांध देनी चाहिए। करीब 24 घंटे बाद फुरहरी के माध्यम से नमूना ले लेना चाहिए।

ix) जीवाणु परीक्षण के लिए पेट अथवा आंत का 15 से.मी. टुकड़ा दोनों तरफ से बाँध कर 2-4 डिग्री से. के तापक्रम पर बर्फ के साथ प्रयोगशाला में भेज देना चाहिए।

x) इंटेरोटाक्सिमिया के लिए आंतों व पेट का 30 से.मी. टुकड़ा क्लोरोफार्म या बर्फ में परिरक्षित कर प्रयोगशाला में भेज देना चाहिए।

6. **विषाणु जाँच हेतु नमूना एकत्रित करना**- इनकी जाँच हेतु प्रभावित अंगों का ही नमूना निम्न विधि से प्रयोगशाला में भेजना चाहिए।

i) उत्तक के नमूने को 5-10 मी.ली. 50 प्रतिशत स्टेराइल ग्लिसरोल सेलाइन के घोल में संरक्षित कर प्रयोगशाला में शीघ्र बर्फ की उपस्थिति में भेजना चाहिए।

ii) हृदय रक्त, रक्त, सीरम व मस्तिष्क द्रव्यी (सेरिब्रोस्पाइनल फ्लूड) को शीशियों में लेकर रेफ्रीजरेशन तापक्रम (2-4ºC) पर बर्फ व थर्मोकोल में प्रयोगशाला में भेजना चाहिए।

कुछ विषाणुजनित रोगों में निम्न नमूना एकत्रित केआर प्रयोगशाला में भेजना चाहिए-

1) **खुरपका-मुहपका:** जीभ की एपिथीलियम या ऊपरी परत, छालों में मौजूद द्रव्य, लार के नमूने लेकर ग्लिसरोल सेलाइन (50 प्रतिशत) में 2-4ºC में प्रयोगशाला में भेजना चाहिए।

2) **बकरी चेचेक:** खुरंड को ग्लिसरोल सेलाइन (50 प्रतिशत) में 2-4ºC में प्रयोगशाला में भेजना चाहिए।

3) **पी.पी.आर.:** आंत व तिल्ली के टुकड़े को 50 प्रतिशत ग्लिसरोल सेलाइन में परिरक्षित कर प्रयोगशाला में भेजना चाहिए।

7. **बाह्य परजीवी की जाँच हेतु नमूनों का लेना**

i) **माइट**- प्रभावित अंग पर मौजूद विकृतियों को (10 प्रतिशत कास्टिक पोटाश या 70 प्रतिशत अल्कोहल या सादे स्वच्छ पानी से धोकर) चाकू से खुरचकर (जब रक्त निकलने लगे) समस्त खुरचन वाले पदार्थ (पपड़ी, बाल इत्यादि) को शीशी या ट्यूब में एकत्रित कर कार्क या ढक्कन लगा देना चाहिए।

ii) **किल्ली**- इनको साधारण चिमटी की सहायता से निकालकर क्लोरोफार्म व 10 प्रतिशत फार्मलीन के साथ मारकर बोतल में जाँच हेतु रखना चाहिए।

iii) **जूं**- जूं को पशु के शरीर से एकत्रित करने के लिए हेयर ब्रश में जाइलिन लगाकर शरीर पर ब्रश करने से या नुकीली कंघी करके सफेद कागज की शीट पर अगल कर 70 प्रतिशत अल्कोहल व 5 प्रतिशत फार्मलीन में संरक्षित कर लिया जाता है।

खोया द्वारा बनाए जाने वाले मूल्य संवर्धित एवं पारपंरिक दूध उत्पाद

रेखा दहिया[1] एवं मोनिका वर्मा[2]

[1]पशु विज्ञान केन्द्र, पलवल, [2]पशुधन उत्पाद प्रौद्योगिकी विभाग,
लाला लाजपत राय पशुचिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

भारत का कुल दूध उत्पादन 231 मिलियन टन हैं। लगभग 5.5 प्रतिशत दूध खोया बनाने में उपयोग किया जाता हैं। खोया या मावा भारतीय मिठाइयों में सबसे अधिक प्रयोग किए जाने वाला दूध पदार्थ है। खोया से बनी मिठाइयाँ कलाकंद, मिल्क केक, गुलाब जामुन, पेड़ा, बर्फी, कुंदा व पंतुआ आदि हैं। भैंस के दूध से बना खोया सफेद व हल्के भूरे रंग का होता है। मिठाई बनाने में भैंस के दूध को गाय के दूध से अधिक उपयुक्त माना जाता हैं। 1 किलो भैंस के दूध से 250 ग्राम शुद्ध खोया प्राप्त हो जाता है। 100 ग्राम खोये में 416 कैलोरी होती हैं, इसके अलावा इसमें विटामिन डी, विटामिन बी, विटामिन के, कार्बोहाइड्रेट व फॉस्फोरस होता हैं। 1 किलो भैंस के दूध से 250 ग्राम शुद्ध खोया प्राप्त हो जाता है। 100 ग्राम खोया में प्रोटीन 20%, वसा 30%, मिनरल 3%, कार्बोहाइड्रेट 20%, कैल्शियम 650 मि.ग्रा., आयरन 6 मि.ग्रा. और फास्फोरस 420 मि.ग्रा. पाया जाता है।

खोया से स्वास्थ को लाभ :

- खोये में विटामिन डी शरीर में कैल्शियम के बेहतर अवशोषण में मदद करता हैं जो हड्डियों को मजबूत और स्वस्थ बनाता है।
- खोया में विटामिन बी (राइबोफ्लेविन) प्रतिरक्षा प्रणाली को स्वस्थ रखने में मदद करता हैं क्योंकि यह शरीर पर हमला करने वाले बैक्टीरिया से लड़ता है।
- खोया में विटामिन के (k) रक्त के स्वस्थ प्रवाह में मदद करता हैं, उच्च रक्तचाप की संभावना को कम करता हैं तथा ह्रदय को स्वस्थ रखता है।
- खोया में उच्च गुणवत्ता वाली प्रोटीन, मांसपेशियों के विकास एवं वृद्धि में सहायक हैं। दूध उत्पादों में कोलीन पाया जाता हैं जो मांसपेशियों में होने वाली क्षति को रोकता है।

खोया: एफएसएसएआई (FSSAI-2007) के अनुसार, खोया गाय या भैंस के दूध या इनके अधिमिश्रित दूध से निर्मित उत्पाद है। इसके लिए दूध को शीघ्रता से स्कदंन किया जाता हैं और खोए के ठोस पदार्थों के आधार पर वसा का 30 प्रतिशत भाग अवश्य होना चाहिए।

तीन प्रकार के खोए बाजारों में उपलब्ध हैं:-

1. धप खोया (गुलाब जामुन, पंतुआ)
2. दानेदार खोया (मिल्क केक, कलांकद)
3. पिंडी खोया (बर्फी, पेड़ा)

पिंडी खोया: दूध (5 लीटर) कड़ाही में निरतंर उबालना कड़छी से निरतंर गोलाकार क्रम में हिलाना गाय दूध 2.8 गुणा गाढ़ा करना भैंस दूध 2.5 गुणा गाढ़ा करना दूध का गाढ़ी पेस्ट के रूप में तैयार होना, ऊपर से सुखना, निरतंर हिलाना गोल गेंद के रूप में पिंडी जैसा तैयार होना पिंडी खोया।

दानेदार खोया: दानेदार खोया बनाने के लिए 0.01-002 प्रतिशत से कम सिट्रिक अम्ल उबलते दूध में डाला जाता है। इससे दूध की प्रोटीन का स्कंदन पहले शुरू हो जाता है। दानेदार खोया बनाने की बाकी की विधि पिंडी खोया बनाने की विधि के समान है। मिल्क केक और कलांकद बनाने के लिए दानेदार खोया का इस्तेमाल होता है।

धप खोया: धप खोए में नमी की मात्रा काफी अधिक होती हैं और लेसदार होता है। जब दूध अर्ध ठोस अवस्था में पहुँच जाता हैं तथा कड़ाही की सतह से लगना शुरू हो जाए। तापन क्रिया को रोक दिया जाता हैं और खोए को कड़ाही से तुंरत निकाल लिया जाता है।

संशोधित विधि :

खोया बनाने के लिए स्टील का जैकेटदार बर्तन एवं मशीन -इनक्लाइंड स्क्रेप्ड सर्फेस हीट एक्सचेंजर (आईएसएसएचई), थिन फिल्म स्क्रेप्ड सर्फेस हीट एक्सचेंजर का इस्तेमाल होता है।

बर्फी : बर्फी दूध से बनी सुप्रसिद्ध मिठाई हैं और जो मुख्य रूप से खोए से बनती हैं। विभिन्न प्रकार की बर्फी जैसे सादा मावा, पिस्ता, सूखे मेवे, चाकलेट, नारियल और खोये से बनी बर्फी बनाई जाती है। इसमें चीनी और अन्य आवश्यक सामग्री अलग -अलग अनुपातों में डाली जाती है। बर्फी की पहचान हैं कि इसका मध्यम किस्म का मीठा स्वाद होता हैं और यह मुलायम हल्की सी चिपचिपी और सूक्ष्म कणों वाली समुचित संरचना की होती हैं। बर्फी का रंग सफेद या हल्का पीला होना चाहिए। बर्फी चौकोर या आयताकार किस्म की होती है।

बर्फी बनाने की विधि:

खोया जाकेटवाले बर्तन में (60º से. पर) तापन चीनी मिलाना (खोए का 30%) खोए को गूँथना (50º से.) योज्य (वैकल्पिक) उथली ट्रे में डालना ठंडा करना बर्फी के आधार में ढालना पैकेजिंग ताजे भैंस के दूध से बना धप खोया बर्फी बनाने के लिए श्रेष्ठ माना जाता हैं। बर्फी को एल्युमीनियम के वर्क और सूखे मेवों से सजाया जाता है। इसके बाद मनपसंद आकार में काटकर आकर्षक डिब्बों में पैक कर दिया जाता है।

पेड़ा : पेड़ा खोए से बनी अन्य मिठाइयों की तुलना में अधिक पसंद किया जाता हैं क्योंकि पेड़े को शुद्ध खाद्य पदार्थ माना जाता है और धार्मिक स्थलों पर 'प्रसाद' के रूप में चढ़ाया जाता है। बाजार में दो तरह के पेड़े मिलते हैं। 1. सादा (मलाईदार या सफेद रंग वाला) और भूरा (लाल) पेड़ा। बर्फी की तुलना में पेड़ा अधिक सख्त और दानेदार किस्म का होता हैं। पेड़े का रंग सफेद, हल्का पीला और भूरा तथा गंध हल्की पकी से जली हुई, पेड़ा मुलायम दानेदार, सामान्यतय गोल एवं 20 से 30 ग्राम का होता है।

पारंपरिक विधि :

पेड़ा बनाने के लिए खोए और चीनी को मिला कर हल्की आँच पर मसला जाता हैं और निरतंर गूंधा जाता है। पेड़े को आमतौर पर गोल आकार में बनाया जाता हैं। पेड़े का भार 20 से 25 ग्रा. का होता है। गोल बनाने के लिए सामग्री को हथेली पर रखकर अंगुलियों से गोल–गोल घुमाते हुए इसे गोल आकार दिया जाता है।

पेड़ा बनाने की विधि :

धप खोया जैकेटवाला बर्तन/कड़ाही में 90º से. पर गर्म करना चीनी मिलाना (खोए का 30%) मसलना (50º से. पर) सुगंधित बनाना इलायची, केसर और अन्य योज्यों का प्रयोग मोल्डिंग/ शेपिंग पेड़ा पैकेजिंग।

पेड़े की परिरक्षण गुणवत्ता को लंबे समय तक बनाए रखने एवं इसे पूरी तरह भूरा रंग देने के लिए खोए और चीनी को घी में या बिना घी के लंबे समय तक पकाया जाता है। मथुरा (उ.प्र.) धारवाड़ (महाराष्ट्र) जिलों में इस किस्म के पेड़े बनाए जाते हैं। सफेद पेड़े की प्राप्ति के लिए अपेक्षाकृत धीमी आँच पर खोए में चीनी को मिलाकर गर्म किया जाता है। कई बार अतिरिक्त सफेदी देने के लिए सोडियम सल्फेट (रंगत या विरंजक चूर्ण) भी मिलाया जाता है।

पेड़ा बनाने की औद्योगिक/यंत्रीकृत विधि:

दुग्ध संयंत्रों (रियॉन शेपिंग एंड फार्मिंग मशीन) जैसी यंत्रीकृत इकाइयों से पेड़े बनाने का कार्य शुरू हुआ है।

दूध संतत खोया निर्माण मशीन गर्म खोया (60º से.) चीनी मिलाना (खोए का 30%) सुगंध एवं अन्य सामग्री (प्लेनेटरी मिक्सर) को मिलाना 10 घंटों के लिए 5º से. पर मिश्रण का भंडारण रियॉन से पेड़ों का निर्माण एवं पैकिंग।

गुलाब जामुन: गुलाब जामुन भारत के सभी भागों में बनने वाली लोकप्रिय मिठाई है। गुलाब जामुन भूरा, समुचित संरचना एवं गोलाकार और हल्का सा स्पंजी और बीच में से थोड़ा सा सख्त और एक समान दानेदार चीनी की चाशनी में पूरी तरह डूबा हुआ नजर आना चाहिए और मिठास से परिपूर्ण होना चाहिए। गुलाब जामुन के भीतर किशमिश या काजू का टुकड़ा भी कई बार रखा जाता है।

गुलाब जामुन बनाने की पारंपरिक विधि:

40 से 45% नमी वाले धप खोए का प्रयोग गुलाब जामुन बनाने के लिए किया जाता है। इस विधि से 750 ग्रा. खोया, 250 ग्रा. मैदा और 5 ग्रा. बेकिंग पाउडर को आपस में अच्छे से मिलाकर मिश्रण को अच्छी प्रकार से गूँध लिया जाता है। गुलाब जामुन जब भी बनाने हो तभी ताजा मिश्रण गूँधना चाहिए। मिश्रण की गोली बनाते समय गोली के बीच में किशमिश या काजू भी रखा जा सकता है। समान्यत: मिश्रण से 10 से 15 ग्रा. की गोलियाँ बनाई जाती हैं और जो एक समान आकार में बनाई जानी चाहिए। अब इन गोलियों को कड़ाही में वनस्पति तेल या घी में गहरा भूरे रंग का होने तक तला जाता है। गोलियों को सही ढंग से तलने में 15 से 20 मिनट का समय लगता है। तलते समय गोलियों को कड़छी की सहायता से ऊपर/ नीचे करते रहें ताकि गोलियाँ चारों तरफ से समान रूप से भूरी हो जायें। इसके बाद लगभग 60º से. पर रखी 60% तैयार चीनी की चाशनी (समान मात्रा में चीनी, पानी और लगभग 50 मिली. दूध को आपस में मिला कर लगभग 10 मिनट तक उबालें) में इन गोलियों को डाल दें। चीनी की चाशनी को पूरी तरह चूसने में इन गोलियों को लगभग 30 मिनट का समय लगता है।

आजकल गुलाब जामुन दो आधारिक सामग्री (1) खोया और (2) गुलाब जामुन मिक्स पाउडर की सहायता से बनाया जाता है। गुलाब जामुन अधिकतर देसी (पारंपरिक) विधि से बनाया जाता है और बड़े पैमाने पर इसके निर्माण वाली यंत्रीकृत विधि को असैम्बली लाइन सिस्टम कहते हैं और सुगम डेयरी, वड़ोदरा (गुजरात) में इसी प्रौद्योगिकी के प्रयोग से गुलाब जामुन बनाए जाते हैं।

काला जामुन : काला जामुन यह भी गुलाब जामुन की तरह गोल, खोए से बनी मिठाई है लेकिन इसका रंग काफी गहरा लगभग जामुन के फल की तरह काला होता है। इसे भारत के कई भागों में कालाजाम भी कहते हैं। यह मिठाई बिना चाशनी के बेची जाती है।

इसे बनाने का तरीका गुलाब जामुन की भांति ही है। इसे खुले तेल में काफी उच्च तापमान पर लगभग एकदम काला रंग का होने तक तला जाता है और इसे चीनी की चाशनी के बिना ही रखा जाता है।

कलाकंद : कलाकंद भी दूध से बनी महत्वपूर्ण देसी मिठाई है, जिसे देश के सभी भागों में बेहद पसंद किया जाता है। कलाकंद भूरे रंग का, चिपचिपा, दानेदार और बड़े आकार के कण ही इसकी खास विशेषता है।

कलाकंद बनाने की विधि:

भैंस के दूध (न्यूनतम 5% वसा और 9.0% एसएनएफ) को बर्तन में डालकर गर्म किया जाता है। पहला उबाल आने पर 0.01% स्ट्रिक अम्ल को थोड़े से पानी में घोल कर दूध में मिला दिया जाता है। यदि अम्लीय दूध हो तो स्ट्रिक अम्ल मिलाने की जरूरत नहीं होती हैं । इस चरण पर बर्तन में उबालते दूध में लगभग 6-7% मात्रा में चीनी मिलायी जाती है और सारी सामग्री को बर्तन की सतह में चारों और फैला दिया जाता हैं। इस चरण पर बर्तन को आँच से नीचे उतार लिया जाता हैं और इसमें वांछित सुगंध और सूखे कटे हुए मेवे डाल कर इन्हें आपस में अच्छे से मिला दिया जाता है। अब कलाकंद को उचित ट्रे या पैकिंग के डिब्बों में डाल दिया जाता है।

कलाकंद दानेदार खोए से भी बनाया जाता है। खोए को बर्तन में डालकर लगभग 70° से. पर गर्म किया जाता हैं और इसमें कुल खोए के 30% की मात्रा में चीनी मिलायी जाती है। अब इस सामग्री को जमने के लिए ट्रे में डाल दिया जाता है और अंतत: अपेक्षित आकार और शेप में काट लिया जाता है।

मिल्क केक : मिल्क केक बनाने में 0.18% की अम्लता वाले भैंस के दूध को प्रयोग किया जाता हैं जिसमें वसा 6% और एस.एन. एफ. 9% हो। चीनी दो चरणों पर 6-6% की दर पर मिलायी जाती है। पहले चरण पर जब दूध आधे से आधा हो तब 6% की दर पर और इसके बाद जब दूध काफी गाढ़ा हो जाये तब पुन: 6% की दर पर चीनी मिलायी जाती है। गर्मागर्म स्थिति लगभग (80-85° से.) की अवस्था में उत्पाद को 60° से. पर रखे और 4 से.मी. गहरी एल्युमिनियम की ट्रे में डाल दिया जाता है। इससे उत्पाद लंबे समय तक गर्म स्थिति में ही रहता है। जिससे बीच में से वह काफी भूरा और स्वाद में कैरेमल गंध देने वाला और आसपास के भागों में हल्का भूरा ही रह जाता है।

मिल्क केक बनाने की विधि:

मानकीकृत भैंस का दूध   कड़ाही या जाकेट वाले बर्तन में उबालना   0.02% स्ट्रिक अम्ल मिलाना   आंशिक सांद्रता (दो गुणा)   आंशिक चीनी मिलाना (दूध 6%)   काफी गाढ़ा होने तक दूध का स्कंदन   बाकी की चीनी मिलाना (दूध का 6%)   गर्मागर्म सामग्री को ट्रे में डालना   60 मिनट के लिए 60° से. पर रखना   कमरे के तापमान पर ठंडा करना   मनपसंद आकार में काटना   पैकजिंग।

कुंदा : कुंदा का रंग हल्के भूरे और गहरे रंग का होता हैं। यह चिपचिपी सतह वाली, मुलायम और दानेदार किस्म की मिठाई है। कुंदा, कर्नाटक के बेलगांव जिले और इसके आसपास के क्षेत्रों में निर्मित पारंपरिक दूध से बनी मिठाई है।

कुंदा बनाने की विधि:

धप खोया   (लगभग 40% नमी)   तपन बर्तन   उथला/दोहरे जाकेट वाला   लगभग 80 से 90° से. पर गर्म करना   चीनी मिलाना   खोए के 20 से 25% की दर पर   स्कंदन (90 से 120 मिनट)   भूरा/कैरेमल उत्पाद (20% नमी)   कुंदा।

पंतुआ : पंतुआ बनाने का मिश्रण खोए एवं छैना से बनता है और साथ में इसमें मैदा एवं बेकिंग पाउडर भी मिलाया जाता है। इसे बनाने की एक विधि के अनुसार इसमें छैना और खोया प्रत्येक (40%), मैदा (3%), अरारोट (3%), सूजी (3%), ग्राउन्ड शुगर (0.6%) और बेकिंग पाउडर (0.3%) के अनुपात में होता है। इसे बनाने की विधि लगभग गुलाब जामुन के समान ही हैं। इस सारी सामग्री को आपस में मिलाकर समुचित किस्म का नर्म लोथ गूँथ लिया जाता है जिसमें लगभग 40% नमी होनी चाहिए। लगभग 12 ग्रा. की गोल-गोल गोलियाँ बनाकर इन्हें 120° से. पर तेल में तल लिया जाता है और भूरे रंग की होने पर इन्हें चीनी की गर्म चाशनी (60° से.) में डाल दिया जाता है। जोकि 55° ब्रिक्स पर सांद्रित होनी चाहिए। छैना को खोए के साथ-साथ ही मिलाया जाता है, इसलिए गुलाब जामुन की तुलना में यह अधिक स्पंजी और चबावदार होता है।

भारत में अधिकतर पारंपरिक दूध उत्पाद हलवाइयों तथा छोटे डेयरी संयंत्रों द्वारा तैयार किए जाते हैं। संगठित एवं बड़े डेयरी संयंत्रों से केवल 15-20% दूध का ही मूल्य संवर्धन किया जाता है। वर्तमान में भारत के लोगों की बदलती जीवन शैली, तेजी से बढ़ता शहरीकरण और अधिक आमदनी के कारण पारंपरिक दूध उत्पादों की मांग काफी बढ़ी है। पशुपालक भी दूध से पारंपरिक दूध उत्पादों का प्रसंस्करण करें और उससे होने वाले मूल्य संवर्धन का लाभ उठाएं। दूध से खोया तैयार कर इसे ऊँचे दामों पर बेचकर अधिक लाभ कमाया जा सकता है। अत: दूध एवं डेयरी को लाभप्रद उद्योग के रूप में विकसित करें।

भारत में स्वाइन फार्मिंग का महत्व और दायरा

करिश्मा चौधरी एवं विनोद कुमार पलसानिया
पशु उत्पादन प्रबंधन विभाग, पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान महाविद्यालय,
नवानिया, उदयपुर (राजस्थान)

भारत एक बड़े और विविधतापूर्ण देश है, जहां कृषि और पशुपालन व्यापार का बहुत महत्व है। इस विविधतापूर्णता के साथ-साथ, आधुनिक युग में स्वास्थ्य और पोषण के मामले में एक स्थिर बदलाव आया है। इस बदलाव के साथ, खासकर भारत में स्वाइन फार्मिंग का महत्व भी बढ़ गया है। स्वाइन फार्मिंग का महत्व आजकल भारतीय अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण योगदान के रूप में देखा जा रहा है। यह व्यवसाय न केवल खाद्य संरक्षण में मदद करता है, बल्कि लाभकारी व्यवसाय के रूप में भी प्रतिष्ठित है।

महत्वः

1. **आहार सुरक्षा**- स्वाइन मांस आजकल भारतीय जनता के लिए मुख्य खाद्य पदार्थों में से एक है। इसकी मांग में वृद्धि देखी जा रही है, जिससे इस उत्पाद की महत्वता और बढ़ जाती है। स्वाइन फार्मिंग इस खाद्य संबंधी मांग को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
2. **रोजगार का अवसर**- स्वाइन फार्मिंग व्यवसाय में लोगों को रोजगार का अवसर प्राप्त होता है। यह किसानों और ग्रामीण क्षेत्रों में नौकरियों के लिए एक महत्वपूर्ण स्रोत है, जिससे गरीबी की समस्या का समाधान हो सकता है।
3. **आर्थिक विकास**- स्वाइन फार्मिंग उद्यम एक अच्छा आर्थिक विकास का माध्यम है। यह न केवल किसानों को आर्थिक स्वतंत्रता प्रदान करता है, बल्कि कृषि क्षेत्र में निवेश को भी बढ़ावा देता है।

दायराः

1. **खाद्य संबंधित उत्पादों की वृद्धि**- स्वाइन फार्मिंग का दायरा आहार संबंधित उत्पादों के विस्तार में मदद करता है। इससे न केवल स्वाइन मांस की मांग को पूरा किया जा सकता है, बल्कि इससे संबंधित उत्पादों की बढ़ती मांग को भी ध्यान में रखा जा सकता है।
2. **अनुप्रयोगिता और तकनीकी उन्नति**- आधुनिक तकनीकी उन्नति के साथ, स्वाइन फार्मिंग की प्रणालियों में भी सुधार किया जा सकता है। यह उत्पादकता में वृद्धि करके और उत्पादन की गुणवत्ता को बढ़ाकर किसानों को अधिक लाभ प्रदान कर सकता है।
3. **उत्पादकता और गुणवत्ता**- स्वाइन फार्मिंग का दायरा उत्पादकता और गुणवत्ता में वृद्धि कर सकता है। अधिक उत्पादन और उत्पादों की अच्छी गुणवत्ता के कारण यह क्षेत्र आर्थिक रूप से प्रभावशाली हो सकता है।

स्वाइन फार्मिंग एक उत्कृष्ट विकल्प है जो आज के समय में भारत में खासतौर पर कृषि और पशुपालन क्षेत्र में अधिक आवश्यक हो रहा है। इसके माध्यम से न केवल खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित किया जा सकता है, बल्कि रोजगार के अवसरों को भी बढ़ाया जा सकता है, जिससे आर्थिक और सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान किया जा सकता है।

बायो/गोबर गैस संयंत्र- गोबर का दोहरा उपयोग

सुजोय खन्ना[1] एवं देवेन्द्र सिंह[2]
[1]हरियाणा पशु विज्ञान केंद्र, करनाल; [2]हरियाणा पशु विज्ञान केंद्र, महेन्द्रगढ़
लाला लाजपतराय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

अगर डेयरी पशुपालक भाइयों या बहनों के पास पर्याप्त मात्रा में पशु और जमीन है तो गोबर से गैस बनाने का संयंत्र लगाया जा सकता है। जो न सिर्फ पर्यावरण के अनुकूल है बल्कि किसान की आमदनी का जरिया या घर का खर्च कम करने में सहायक रहता है। गोबर गैस प्लांट से गोबर से गैस उत्पन्न की जा सकती है जिसका उपयोग घर एवं डेयरी में खाना पकाने, रोशनी करने या बेचने में किया जा सकता है। एक अनुमान के मुताबिक 500 जानवरों वाली डेयरी में बायो गैस इकाई लगाने के लिए के लिए 10 फुट × 10 फुट जगह की जरूरत होगी जबकि 1000 जानवरों वाली डेयरी में 15 फुट ×15 फुट जगह में बाया गैस संयंत्र लगाया जा सकता है।

बायो गैस प्लांट एक तरह का सीलबंद किया गया एक कंटेनर है जिसमें कार्बनिक कचरे को एनेरोबिक बैक्टीरिया के साथ मिलाने के लिए एक रास्ता बना होता है। ऑक्सीजन की गैर-मौजूदगी में एनेरोबिक बैक्टीरिया कचरे को गैसों के मिश्रण में बदल देता है जिसमें 60 प्रतिशत मीथेन और 40 प्रतिशत कार्बन डाई आक्साइड होती है। बायो गैस जनरेटर से निकलने वाली मीथेन प्राकृतिक गैस का मुख्य घटक है जिसका उपयोग घरों को गर्म करने और इसी तरह के कई अन्य कार्यों जैसे पानी गर्म करने और खाना पकाने में किया जा सकता है। इस्तेमाल के बाद निकला गोबर-पानी का मिश्रण सूख जाने के बाद बेहतरीन जैविक खाद का काम करता है। बायो गैस प्लांट के ऊपर लगे पाइप के जरिए बाहर आने लगती है जबकि इस्तेमाल हो चुका गोबर-पानी का मिश्रण नीचे की पाइपों से बाहर निकाल दिया जाता है। गोबर गैस इकाई लगाने के लिए खुद जोड़ जुगाड़ करने की बजाय किसी पेशेवर कंपनी से इसे लगवाना ज्यादा अच्छा रहता है।

बायोगैस उत्पादन के फायदे

- इससे प्रदूषण नहीं होता है यानी यह पर्यावरण प्रिय है।
- बायो गैस उत्पादन के लिए आवश्यक कच्चे पदार्थ पशुपालकों के पास प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है।
- इनसे सिर्फ बायो गैस का उत्पादन ही नहीं होता, बल्कि फसलों की उपज बढ़ाने के लिए समृद्ध खाद भी मिलता है।
- गांवों के छोटे घरों में जहां लकड़ी और गोबर के गोयठे का जलावन के रूप में इस्तेमाल करने से धुएं की समस्या होती है, वहीं बायो गैस से ऐसी कोई समस्या नहीं होती।
- यह प्रदूषण को भी नियंत्रित रखता है, क्योंकि इसमें गोबर खुले में पड़े नहीं रहते, जिससे कीटाणु और मच्छर नहीं पनप पाते।
- बायो गैस के कारण लकड़ी की बचत होती है, जिससे पेड़ काटने की जरूरत नहीं पड़ती। इस प्रकार वृक्ष बचाये जा सकते हैं।

निर्माण स्थल का चयन

गोबर गैस संयंत्र के निर्माण स्थल का चयन निम्नलिखित बातों से तय होता है:

- यह स्थान आस-पास की जमीन से थोड़ा सा ऊंचा होना चाहिए जिससे पानी के जमाव से बचा जा सके। इससे गोबर और खाद के मिश्रण के अधिक हो जाने पर बहकर कम्पोस्टिंग पिट में पहुंचने में भी मदद मिलती है।
- बायो डायजेस्टर्स के ठीक से कार्य करने के लिए इनके अंदर सही तापमान (20-35 डिग्री सेल्सियस) बनाए रखना चाहिए। इसलिए संयंत्र लगाने के लिए छायादार और ठंडे स्थान की बजाय धूपवाली जगह को चुनना चाहिए।
- गोबर गैस संयंत्र का संचालन आसान बनाने और कच्चे माल, खास तौर पर गोबर की बर्बादी रोकने के लिए इसका जानवरों के बाड़े के करीब होना जरूरी है।
- गोबर और पानी को मिलाने या खाद को डायजेस्टर में बहान के लिए काफी मात्रा में पानी की आवश्यकता होती है। अगर पानी का स्रोत दूर है तो पानी लाने में काफी मेहनत खर्च करनी पड़ती है। इसलिए संयंत्र स्थल के पास पानी का स्थायी स्रोत होना चाहिए।
- स्थान का चयन करते समय प्लांट में गोबर डालने, गैस के

मुख्य वाल्ब के उपयोग, कम्पोस्ट खाद बनाने, इस्तेमाल के बाद गोबर पानी के मिश्रण के उपयोग, गैस लीकेज रोकने, पाइपलाइन में संघनित होकर जमा हुए पानी की निकासी जैसी संचालन और रखरखाव संबंधी विभिन्न गतिविधियों में सुविधा का भी ध्यान रखा जाना चाहिए।

- गोबर गैस प्लांट लगाने के लिए चुना गया स्थान पेड़ों से दूर होना चाहिए क्योंकि पेड़ों की जड़ों से प्लांट के डायजेस्टर को नुकसान पहुंच सकता है।
- प्लांट से भूमिगत जल के प्रदूषण को रोकने के लिए बायो डायजेस्टर की कुंए अथवा जल स्रोत से दूरी, खास तौर पर स्लरी पिट की दूरी, कम से कम 10 मीटर होनी चाहिए।
- अगर गैस को लेजाने के लिए लंबी गैस पाइपलाइनों का उपयोग किया जाता है तो बायोगैस उत्पादन की लागत बढ़ जाएगी क्योंकि तब संवहन प्रणालीपर ज्यादा खर्च करना पड़ेगा। इसके अलावा पाइप लाइन लंबी होने से गैस के लीक होने का खतरा भी बढ़ जाता है। गैस होल्डर के ठीक ऊपर लगे मुख्य गैस वाल्व को बायोगैस का उपयोग करने से पहले और बाद में खोला और बंद किया जाना चाहिए। इसलिए बायोगैस प्लांट का गैस के उपयोग के स्थान के अधिक से अधिक पास होना जरूरी है।
- जिस स्थान पर संयंत्र लगाया जाए वहां की मिट्टी की क्षमता इतनी होनी चाहिए कि वह समूचे ढांचे के वजन को झेल सके और यह जमीन में धंसने न पाये।

बायोगैस उत्पादन संयंत्र के मुख्य घटक

बायो गैस के दो मुख्य मॉडल हैं: फिक्स्ड डोम (स्थायी गुंबद) टाइप और फ्लोटिंग ड्रम (तैरता हुआ ड्रम) टाइप उपर्युक्त दोनों मॉडल के निम्नलिखित भाग होते हैं:

1) **डाइजेस्टर:** यह एक प्रकार का टैंक है, जहां विभिन्न तरह की रासायनिक प्रतिक्रिया होती है। यह अंशत: या पूर्णत: भूमिगत होता है। यह सामान्यत: सिलेंडर के आकार का होता है और ईंट-गारे का बना होता है।
2) **गैसहोल्डर:** डाइजेस्टर में निर्मित गैस निकल कर यहीं जमा होता है। इसके उपर से पाइपलाइन के माध्यम से गैस चूल्हे के बर्नर तक ले जायी जाती है।
3) **स्लरीमिक्सिंगटैंक:** इसी टैंक में गोबर को पानी के साथ मिला कर पाइप के जरिये डाइजेस्टर में भेजा जाता है।
4) **आउटलेट टैंक और स्लरी पिट:** सामान्यत: फिक्स्ड डोम टाइप में ही इसकी व्यवस्था रहती है, जहां से स्लरी को सीधे स्लरी पिट में ले जाया जाता है। फ्लोटिंग ड्रम प्लांट में इसमें कचरों को सुखा कर सीधे इस्तेमाल के लिए खेतों में ले जाया जाता है।

बायो गैस संयंत्र का आकार

बायो गैस संयंत्र का आकार तीन बातों पर आधारित होता है:

- उत्पन्न होने वाले गोबर की दैनिक मात्रा
- बायो गैस उत्पन्न होने तक डेयरी में गोबर स्टोर करने की क्षमता
- डायजेस्टर का आकार

संयंत्र की क्षमता कच्चे माल की उपलब्धता के आधार पर तय की जानी चाहिए। संयंत्र की क्षमता से उसमें बनने वाली गैस की दैनिक मात्रा का निर्धारण होता है। गाय का एक किलोग्राम गोबर को इतने ही पानी के साथ बिना हवा के रखने से एक दिन में 40 लीटर बायो गैस उत्पन्न होती है।

अगर बायो गैस संयंत्र को पर्याप्त गोबर नहीं मिलता तो गैस का उत्पादन कम पड़ जाएगा। ऐसे में हो सकता है कि गैस का दबाव इतना अधिक न हो कि गोबर-पानी के पतले मिश्रण को हटा कर आउटलट चेम्बर तक पहुंचा सके। अगर डायजेस्टर में बहुत ज्यादा सामग्री डाली जाती है और गैस की कुछ मात्रा का उपयोग भी किया जाता है तो यह मुमकिन है कि गोबर-पानी का मिश्रण गैस पाइपलाइन से होता हुआ गैस उपकरणों तक पहुंच जाए।

डायजेस्टर का आकार यानी डायजेस्टर का आयतन प्रतिधारण काल की अवधि पर और संयंत्र को रोजाना सप्लाई किये जाने वाले गोबर-पानी के मिश्रण की मात्रा पर निर्भर करता है। फर्मेंटेशन स्लरी की मात्रा में फीड सामग्री यानी जानवरों का गोबर और उसमें मिलाया जाने वाला पानी शामिल हैं।

बायो गैस संयंत्र की स्थिति

बायो गैस संयंत्र डेयरी से ज्यादा दूर पर नहीं होने चाहिए। डाइजेस्टर चेम्बर किसी खुले इलाके में होना चाहिए और इसके आस-पास पानी का कोई प्राकृतिक या कृत्रिम स्रोत नहीं होना चाहिए क्योंकि पशुओं का मल रिस कर भूमिगत जलस्रोतों तक पहुंच सकता है। बाढ़ के खतरे से बचने के लिए बायो गैस संयंत्र को किसी ऊंचे स्थान पर लगाया जाना चाहिए क्योंकि निचले स्थान बाढ़ की स्थिति में पानी में डूब सकते हैं। फालतू खाद को या तो स्टोरेज टैंक में जमा किया जाना चाहिए या फिर खेतों में छोड़ देना चाहिए। प्रदूषण के खतरे से बचने के लिए इसे कभी भी पानी के प्राकृतिक स्रोतों जैसे

नदी आदि में नहीं फेंका जाना चाहिए।

सावधानियाँ

- गोबर गैस प्लांट लीकेज रहित होना चाहिए।
- गैस पाइप और अन्य उपकरणों की जांच करते रहना चाहिए।
- गोबर डालने और बाहर निकलने का पाइप ढका होना चाहिए।

डेरी फार्म में वेस्ट मैनेजमेंट:

डेयरी संचालन का प्रत्येक ऑपरेशन कोई न कोई अनूठी समस्या को प्रस्तुत करता है। आज के आधुनिक कृषि और पशुपालन संसार में जहाँ जनसंख्या बहुत तेजी से बढ़ रही है और स्थान की कमी होती जा रही है। दुधारू पशुओं का अपशिष्ट पशु एवं मानव स्वास्थ्य के साथ-साथ स्वच्छ पर्यावरण के लिए भी खतरा बन सकता है। पशुओं में इससे कई रोग हो सकते हैं, जिस में सबसे बड़ा खतरा थनेल्ला रोग का है। साथ ही मखी/मच्छर भी पनपते हैं जो मनुष्यों में भी गोबर या अन्य उत्सर्जित पदार्थों से रोग फैलने का खतरा बढ़ा देते हैं। पुराने पशुघर अपशिष्ट प्रबंधन के लिए पर्याप्त विचार के साथ नहीं बनाये गए थे। परिणामस्वरूप अपशिष्ट प्रबंधन प्रणाली के डिजाइन में मौजूदा सुविधाओं के छोटे-छोटे संशोधनों से या परिवर्तनों की आवश्यकता हो सकती है।

अत: किसानों के पास गोबर के कुशल प्रबन्धन के लिए मुख्यत: ये विकल्प हैं।

- गोबर/कचरा तरल पदार्थों का नियन्त्रित प्रवाह
- पशुघर के अन्दर ही गोबर/कचरा का प्रबंधन
- आबादी से दूर सुनसान जगहों पर बड़े-बड़े गड्ढों (लैगून) का निर्माण कर गोबर आदि का भण्डारण।

गोबर की खाद: खाद का पौधों व फसल उत्पादन में महत्वपूर्ण स्थान है। मिट्टी में मिलाए जाने पर जो पदार्थ उसकी उर्वरता में सुधार करते हैं, वह खाद कहलाते हैं। खाद देने का मुख्य उद्देश्य पौधों व फसलों को संतुलित पोषक एवं आवश्यक तत्व उपलब्ध करना है। खाद मिट्टी की भौतिक दशा में सुधार करके भूमि में पोषक तत्वों की उपलब्धि बढ़ाकर उसकी शक्ति में वृद्धि करती है।

तरल खाद भंडारण प्रणाली

पशु के बाड़े में चरनी से नाले वाले जोड़ने वाले फर्श की ढलान 60 फुट पर 1 फुट के अनुपात में होना चाहिए और शेड के अन्दर बने नाले की ढलान 100 फुट पर 1 फुट के अनुपात में होना चाहिए। इसके साथ ही नाले का ढलान तरल खाद भंडारण टैंक तक हर 250 फुट पर 1 फुट के अनुपात में होना चाहिए। प्रत्येक बाड़े से तरल खाद को खुली सतह वाले मुख्य नाले से जोड़ा जाना चाहिए।

वर्मी-कंपोस्ट इकाई : वर्मी का मतलब है केंचुए हैं। वर्मी कंपोस्ट केंचुओं और सूक्ष्मजीवों द्वारा तैयार की जाने वाली जैव खाद है जो पशुओं के गोबर और खेतों के कचरे में पलते हैं। वर्मी कंपोस्ट करने से अपशिष्ट पदार्थों के खाद में बदलने की प्रक्रिया तेज हो जाती है। वर्मी कंपोस्टिंग यानी ठोस अपशिष्ट पदार्थों के प्रबंधन की पर्यावरण की दृष्टि से अनुकूल और लागत की दृष्टि से किफायती तकनीक है। वर्मी कंपोस्टिंग यानी गोबर गैस संयंत्र से निकले कचरे से खाद बनाने का कार्य जमीन में गड्ढा बनाकर किया जाना चाहिए। सीमेंट और ईंटों का इस्तेमाल किया जाता है। बरसात में पानी के जमाव को रोकने के लिए गड्ढे का ऊपरी स्तर जमीन से कुछ ऊंचा रखा जाता है। गड्ढे का फर्श बीच से कुछ उठा हुआ और कोनों की ओर ढलान वाला बनाया जाता है। सीमेंट के स्थायी गड्ढों के निर्माण से बचने के लिए गड्ढे के तले में प्लास्टिक की चादर बिछायी जा सकती है। इससे केंचुए और वर्मी वॉश जमीन में नहीं पहुंच पाते। आंशिक रूप से सड़े गोबर के ढेर को 1 मीटर चौड़ी और 75 सें.मी. ऊंची ढेरियों में रखा जाता है जिनके बीच की दूरी 75 सें.मी. होती है ताकि वर्मी कंपोस्ट उठाने के लिए बीच में से आया-जाया जा सके। शेड की दीवारें गैल्वेनाइज्ड स्टील पाइपों के ढांचे से (आठ फुट ऊंची और खंभे आठ-आठ फुट की दूरी पर) बनायी जा सकती हैं। केंचुओं को धूप से बचाने के लिए इस ढांचे को हरे रंग का एग्रोनेट से ढक देना चाहिए। शेड की चौड़ाई 20 फुट और लंबाई डेयरी की गोबर-उत्पादन क्षमता के अनुसार कम या ज्यादा रखी जानी चाहिए। शेड की छत गोलाई लिए हुए या बैरल के आकार की होनी चाहिए और इसपर हरे रंग का एग्रोनेट चढ़ा देना चाहिए। बरसात के मौसम में पानी के रिसाव से बचाने के लिए छत पर प्लास्टिक की एक और चादर से ढक देना चाहिए। छत का एक विकल्प छप्पर भी हैए जिसकी ढलान 20 डिग्री होनी चाहिए और इसे सहारा देने के लिए आठ फुट ऊंचे लकड़ी के खंभे लगाये जाने चाहिए। अगर पैसे की कमी हो तो वर्मी पिट को ही ढकने का इंतजाम कर लेना चाहिए।

गोबर गैस संयंत्र/बायो गैस संयंत्र

अगर डेयरी फार्म या पशु घर के पास पर्याप्त जमीन है तो गोबर से गैस बनाने का संयंत्र लगाया जा सकता है। इससे गोबर से गैस उत्पन्न की जा सकती है जिसका उपयोग रोशनी करने, खाना पकाने और किसानों को बेचने में किया जा सकता है।

डेयरी अपशिष्टः आय का नया स्रोत

हिमांशु शर्मा[1], ऋचा मिश्रा[2] एवं शीतल पन्त[1]
[1]चौ. चरण सिंह राष्ट्रीय पशु स्वास्थ्य संस्थान, बागपत
[2]पशुपालन विभाग उत्तर प्रदेश, मुजफ्फरनगर

भारत सरकार ने किसानों की आय दोगुनी करने की योजना बनाई और इसके लिए कई नीतियों में सुधार किया। भारतीय किसान पशुधन पालन पर निर्भर हैं, लेकिन इसके उप-उत्पादों या अपशिष्ट उत्पादों का उपयोग नहीं करते हैं। कृषि, घरेलू और पशु अपशिष्ट के उपयोग से किसानों की आय में उल्लेखनीय वृद्धि हो सकती है। पशु खाद का पर्यावरण अनुकूल उपचार और उपयोग पशुधन उद्योग के लिए एक चुनौती है। पशु खाद के कई फायदे हैं और अगर सही तरीके से उपयोग किया जाए तो इसका उपयोग फसलों, पशु चारे और ऊर्जा उत्पादन के लिए किया जा सकता है। पशु खाद नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम से भरपूर होती है। फसलों की वृद्धि के लिए अतिरिक्त पोषक तत्व प्रदान करने के अलावा, उर्वरक का मिट्टी पर कई लाभकारी प्रभाव पड़ते हैं। जैविक अपशिष्ट अनुप्रयोग मिट्टी के कार्बनिक अंश और समुच्चय की स्थिरता को बढ़ाकर मिट्टी के घनत्व को कम करता है।

जैविक कचरा मिट्टी की जल धारण दर, जल धारण क्षमता और हाइड्रोलिक चालकता को भी बढ़ा सकता है। ये सभी पशु खाद उत्पाद तभी उपयोग में आते हैं जब इनका सावधानीपूर्वक प्रबंधन किया जाए। अन्यथा, वे पर्यावरण को नुकसान पहुंचाते हैं। पशु खाद के साथ सबसे आम पर्यावरणीय समस्या यह है कि यह हवा को प्रभावित करता है, खराब गंध पैदा करता है, बहुत अधिक कार्बन डाइअश्वक्साइड और अमोनिया का उत्सर्जन करता है और अम्लीय वर्षा और ग्रीनहाउस प्रभाव का कारण बन सकता है। यह जल स्रोतों को भी दूषित कर सकता है और बीमारी फैला सकता है। यदि जल उपचार की योजना सही ढंग से नहीं बनाई गई तो पानी की गंध और प्रदूषण के कारण सामाजिक समस्याएं पैदा हो सकती हैं। बड़े कचरे का उपयोग उचित ढंग से किया जाना चाहिए और पोषक तत्वों को बिना किसी प्रदूषण के मिट्टी में वापस आना चाहिए। अतः इनका समुचित उपयोग करें।

कृषि अपशिष्ट न केवल पर्यावरण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि डेयरी क्षेत्र को महत्वपूर्ण आर्थिक लाभ भी पहुंचा सकता है।

अपशिष्ट प्रबंधन के नवीनतम तरीकेः

1. **गोबर का उपला**- उर्वरक के अलावा, विकासशील देशों में गाय के गोबर को हाथ से इकट्ठा किया जाता है, सूखने के लिए रैक पर रखा जाता है और खाना पकाने और हीटिंग के लिए ईंधन के रूप में उपयोग किया जाता है। भारत के उत्तरी राज्यों में, गाय का गोबर खाना पकाने के लिए मुख्य ईंधन है।

2. **खाद बनाना**- खाद बनाना उच्च तापमान (45 से 65 डिग्री सेल्सियस) पर कार्बनिक पदार्थों का जोरदार ऑक्सीकरण है जहां जीव (ज्यादातर बैक्टीरिया, कवक और एक्टिनोमाइसेट्स) गर्मी, कार्बन -डाइ-ऑक्साइड और पानी छोड़ते हैं। विषमांगी कार्बनिक पदार्थ घूर्णन या वातन द्वारा सजातीय और स्थिर ह्यूमस जैसे पदार्थ में बदल जाते हैं। खाद बनाना बायोडिग्रेडेबल जैविक कचरे का एरोबिक विघटन है। यह एक तीव्र बायोडिग्रेडेशन प्रक्रिया है जिसमें स्थिर उत्पाद तक पहुंचने में आमतौर पर 4-6 सप्ताह लगते हैं। खाद सामग्री में कोई गंध, अच्छी बनावट और पानी की मात्रा नहीं होती है और इसका उपयोग जैविक उर्वरक के रूप में किया जा सकता है। जैविक कचरे से खाद बनाना खाद में नाइट्रोजन को संरक्षित करने का एक अच्छा तरीका है और इससे खाद की लागत बढ़ जाती है।

3. **बायोगैस उत्पादन**- बायोगैस एक स्वच्छ और पर्यावरण के अनुकूल ईंधन है जिसे पशु, घरेलू और कृषि अपशिष्टों के अवायवीय अपघटन से प्राप्त किया जा सकता है, जो ग्रामीण क्षेत्रों में प्रचुर मात्रा में है। बायोगैस बैक्टीरिया की वह प्रक्रिया है जो अवायवीय परिस्थितियों में कार्बनिक पदार्थों को गैस में परिवर्तित करती है। बायोगैस में आम तौर पर 55-65% मीथेन, 35-45% कार्बन डाइऑक्साइड, 0.5-1.0% हाइड्रोजन सल्फाइड और थोड़ी मात्रा में जल वाष्प होता है।

बायोगैस का औसत तापमान 20 MJ/m^3 (4713 $kcal/m^3$) है। अनुमान है कि भारत प्रतिवर्ष 6.38×1010 क्यूबिक मीटर बायोगैस का उत्पादन करने के लिए 980 मिलियन टन गाय खाद का उपयोग कर सकता है। इसके अलावा 350 मिलियन टन उर्वरक और बायोगैस का उत्पादन किया जाएगा।

बायो गैस उत्पादन के विभिन्न लाभः

- बायोगैस उत्पादन एक पर्यावरण अनुकूल प्रक्रिया है जो टिकाऊ कृषि का समर्थन करती है।
- यह नवीकरणीय ऊर्जा के सस्ते स्रोतों में से एक है और इसे सीवेज से प्राप्त किया जा सकता है। तरल खाद और कृषि का जैविक कचरा।
- बायोगैस घरों की ऊर्जा जरूरतों को पूरा करती है और मिट्टी की स्थिति और घरेलू स्वच्छता दोनों में सुधार करती है।
- यह पशुधन से होने वाले कुल ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को सीमित करता है।

4. **वर्मीकम्पोस्ट**– वर्मीकम्पोस्ट एक जैविक उर्वरक है जो विभिन्न एसपीपी का उपयोग करके कृषि और पशु अपशिष्टों के अपघटन से उत्पन्न होता है। केंचुए का यह नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटेशियम और विभिन्न सूक्ष्म पोषक तत्वों, एंजाइमों (एमाइलेज, सेल्युलोज, प्रोटीज, लाइपेज, चिटिनेज), पादप हार्मोन (ऑक्सिन, जिबरेलिन, साइटोकिनिन) और कुछ नाइट्रोजन–फिक्सिंग बैक्टीरिया (एक्टिनोमाइसेट्स, स्यूडोमोनस आदि) से समृद्ध है। जटिल वर्मीकम्पोस्ट की तुलना रासायनिक उर्वरकों से नहीं की जा सकती है, लेकिन जब इसे मिट्टी में लगाया जाता है तो यह मिट्टी की संरचना, बनावट, जल धारण क्षमता में सुधार कर सकता है, वातन को बढ़ावा दे सकता है और मिट्टी के कटाव को रोक सकता है। यह योजना बहुत ही सरल और कम लागत वाली है, इसलिए इसका उपयोग ग्रामीण किसान आसानी से कर सकते हैं और लाभ उठा सकते हैं। इसके अतिरिक्त, एक तकनीक के रूप में वर्मीकम्पोस्टिंग कृषि और पशुधन से निकलने वाले बहुत सारे कचरे को संभाल सकती है। इससे ग्रामीण लोगों को स्वस्थ, समृद्ध और उत्पादक वातावरण प्रदान करके उनका कल्याण भी होता है।

5. **कीट प्रतिकारक**– बीटी कपास और लोबिया के प्रमुख कीटों पर गोमूत्र और विभिन्न जैव कीटनाशकों की प्रभावकारिता पर एक पायलट अध्ययन किया गया है और यह पाया गया कि पानी में घुले गोमूत्र (75%) और नीम के तेल (1%) के संयोजन ने प्रभावी ढंग से नियंत्रित किया। लोबिया और कपास की फसलों में थ्रिप्स, जैसिड, एफिड और सफेद मक्खी जैसे चूसने वाले कीड़े। गौमूत्र का छिड़काव करने से फंगल रोग, बैक्टीरिया और वायरस नष्ट हो जाते हैं। 15% की सांद्रता पर गोमूत्र पर किए गए अध्ययन से पता चला है कि फंगल रोग (जैसे फ्यूसेरियम अज्ञूक्सीस्पोरम, राइजोक्टोनिया सोलानी और बैक्टीरिया) में निरोधात्मक प्रभाव होता है। मक्का और मोरिंगा की फसल में कीड़ों के नियंत्रण के लिए विभिन्न परीक्षणों में विभिन्न जैव–कीटनाशकों और गाय और भैंस के ताजा मूत्र के संयोजन का उपयोग किया जा रहा है।

6. **आसुत गौमूत्र उत्पाद**– आसुत मूत्र पीने से हमारे शरीर की सुरक्षा में भी मदद मिलती है, यह पूर्ण विषहरणकर्ता के रूप में कार्य करता है, वसा कम करता है और इस प्रकार कोलेस्ट्रॉल को नियंत्रित करता है। यह क्षतिग्रस्त ऊतकों और कोशिकाओं को भी पुनर्जीवित करता है और जोड़ों के दर्द को कम करता है।

7. **गोबर के बर्तन और गोबर के लट्ठे, धूप और अगरबत्ती**– गोबर के बर्तन प्लास्टिक के बर्तनों का एक अच्छा विकल्प हैं और गोबर के लट्ठे लकड़ी के लट्ठों की जगह ले सकते हैं। इन लकड़ियों का उपयोग हवन, श्मशान और कैम्पफायर में किया जा सकता है। गाय के गोबर से बनी धूप और अगरबत्ती और कुछ हवन सामग्री से घर की हवा को शुद्ध किया जा सकता है।

8. **त्वचा देखभाल उत्पाद**– त्वचा देखभाल उद्योग में ऐसे कई तरीके हैं जो उपभोक्ता के इस विश्वास से प्रभावित होते हैं कि त्वचा पर उपयोग किए जाने पर ये उत्पाद प्राकृतिक, रासायनिक रूप से निष्क्रिय और गैर विषैले होते हैं। यह सब दूध प्रोटीन और दूध में समृद्ध अमीनो एसिड के कारण है जो त्वचा को परेशान नहीं करता है। कुछ स्टार्टअप साबुन, टूथपेस्ट, फर्श क्लीनर, हेयर ऑयल, शेविंग क्रीम और फेस वॉश बनाने में गाय के उत्पादों का उपयोग कर रहे हैं। काउपेथी साबुन में सूखे और कुचले हुए गाय के गोबर, संतरे के छिलके, लैवेंडर पाउडर और आंवले को मिलाने की सलाह देते हैं जबकि टूथपेस्ट में गोबर, तेल और मूत्र को मिलाने की सलाह देते हैं।

9. **विशेष औषधियाँ**– पंचगव्य आयुष मंत्रालय और राष्ट्रीय कामधेनु आयोग द्वारा विकसित एक अनूठी औषधि है। हमारा मानना है कि ये व्यावसायिक विचार किसानों के लिए अधिक वित्तीय सुरक्षा प्रदान कर सकते हैं। वर्तमान जीवन स्थितियों में सुधार कर सकते हैं और शहरी आबादी द्वारा उपभोग किए जाने वाले भोजन की गुणवत्ता से उपभोक्ताओं को लाभान्वित कर सकते हैं।

10. **गाय के गोबर से बनी मच्छर छड़ी का बिजनेस**– भारतीय बाजारों में गाय के गोबर की मच्छर छड़ी की मांग भी बढ़ गई है क्योंकि गाय के गोबर से बनी अगरबत्ती प्रभावी कीट प्रतिरोधी हैं। इन अगरबत्तियों की गंध से मच्छर और कीड़े भाग जाते हैं। परिणामस्वरूप आने वाले वर्षों में गाय के गोबर से बनी अगरबत्ती व्यवसाय एक आकर्षक उद्यम हो सकता है।

11. **गाय के गोबर का पेंट**– गाय के गोबर से बने पेंट का

उत्पादन खादी और ग्रामोद्योग परिषद (KVIC) द्वारा किया जाता है, जो खादी और ग्रामोद्योग को बढ़ावा देने और विकसित करने के लिए स्थापित एक संगठन है। यह बाजार में एंटीसेप्टिक गुणों वाला विशेष दीवार पेंट है और यह डिस्टेंपर पेंट और प्लास्टिक इमल्शन पेंट के रूप में दो प्रकार का होता है। भारतीय विज्ञान एवं पर्यावरण केंद्र (सीएसई) के शोध के अनुसार, भारत में अधिकांश पेंट में सीसा, पारा, क्रोमियम, आर्सेनिक, कैडमियम आदि होते हैं और ये बहुत खतरनाक होते हैं।

मानव स्वास्थ्य– 'खादी प्राकृतिक रंग' सुरक्षित और गैर विषैला है क्योंकि इसमें भारी धातुएं और रसायन नहीं होते हैं। इन पेंटों के उत्पादन की लागत बहुत कम है क्योंकि रंगों के लिए कच्चा माल ज्यादातर ग्रामीण किसानों का गोबर है जिनके पास डेयरी पशुधन हैं। अनुमान है कि पेंट उत्पादन से इन किसानों को प्रति वर्ष प्रति पशु 30,000 रुपये (US$ 400) तक की अतिरिक्त आय होगी।

निष्कर्ष:

डेयरी उद्योग भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान करता है, जिससे लाखों लोगों को रोजगार मिलता है और अर्थव्यवस्था में योगदान होता है। इसके अलावा, डेयरी उद्योग ग्रामीण विकास को बढ़ावा देता है और विदेशी मुद्रा अर्जित करने में मदद करता है। लेकिन इसके साथ ही, डेयरी उद्योग पर्यावरण प्रदूषण का एक प्रमुख स्रोत भी है, जैसे कि जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, भूमि प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन।

डेयरी अपशिष्ट, जैसे कि दूध की पैकेजिंग, दूध के अवशेष और गाय के मल–मूत्र, पर्यावरण के लिए हानिकारक हो सकते हैं। लेकिन यदि हम इन अपशिष्टों का सही तरीके से उपयोग करें, तो यह न केवल पर्यावरण के लिए फायदेमंद हो सकता है, बल्कि आय का एक नया स्रोत भी बन सकता है। डेयरी अपशिष्ट का उपयोग जैविक खाद बनाने, बायोगैस उत्पादन, पशु आहार बनाने, औद्योगिक उपयोग और ऊर्जा उत्पादन में किया जा सकता है।

इस प्रकार, डेयरी उद्योग को अपने अपशिष्ट का सही तरीके से उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, ताकि हम एक स्वच्छ और समृद्ध भविष्य की दिशा में कदम बढ़ा सकें। डेयरी अपशिष्ट के उपयोग से विभिन्न फायदे होते हैं जो पर्यावरण, अर्थव्यवस्था और समाज के लिए लाभदायक होते हैं। सबसे पहले, डेयरी अपशिष्ट के उपयोग से पर्यावरण प्रदूषण कम होता है, जिससे जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, भूमि प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन कम होता है। इसके अलावा, डेयरी अपशिष्ट के उपयोग से आय के नए स्रोत बनते हैं, जैसे कि जैविक खाद, बायोगैस, पशु आहार और औद्योगिक उत्पादों की बिक्री से आय बढ़ती है। इसके साथ ही, डेयरी अपशिष्ट के उपयोग से रोजगार के नए अवसर बनते हैं, जैसे कि जैविक खाद उत्पादन, बायोगैस उत्पादन, पशु आहार उत्पादन और औद्योगिक उत्पादन में रोजगार बढ़ता है। इसके अलावा, डेयरी अपशिष्ट से बायोगैस बनाने से ऊर्जा की बचत होती है, जिससे ऊर्जा की मांग कम होती है, ऊर्जा की बचत होती है, विदेशी मुद्रा की बचत होती है और पर्यावरण प्रदूषण कम होता है। इन फायदों को देखते हुए, डेयरी अपशिष्ट का उपयोग करना न केवल पर्यावरण के लिए फायदेमंद है, बल्कि अर्थव्यवस्था और समाज के लिए भी लाभदायक है। यह हमें एक स्वच्छ, समृद्ध और स्थायी भविष्य की दिशा में बढ़ने में मदद करता है।

डेयरी अपशिष्ट का उपयोग आय के नए स्रोत के रूप में किया जा सकता है, साथ ही यह पर्यावरण संरक्षण में भी मदद करता है। डेयरी उद्योग को अपने अपशिष्ट का सही तरीके से उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, ताकि हम एक स्वच्छ और समृद्ध भविष्य की दिशा में कदम बढ़ा सकें। डेयरी अपशिष्ट के उपयोग से न केवल आर्थिक लाभ होता है, बल्कि यह पर्यावरण के लिए भी फायदेमंद है, जैसे कि जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण और भूमि प्रदूषण को कम करने में मदद करता है, साथ ही जलवायु परिवर्तन को भी कम करता है।

डेयरी उद्योग को अपने अपशिष्ट का उपयोग करने से आय में वृद्धि होती है, रोजगार के अवसर बढ़ते हैं, पर्यावरण संरक्षण होता है, और ऊर्जा संरक्षण होता है। इसलिए, डेयरी उद्योग को अपने अपशिष्ट का सही तरीके से उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, ताकि हम एक स्वच्छ, समृद्ध और स्थायी भविष्य की दिशा में कदम बढ़ा सकें। यह हमारे भविष्य के लिए एक महत्वपूर्ण कदम होगा और हमें एक बेहतर भविष्य की दिशा में ले जाएगा।

इक्वाईन शुल

दिशांत सैनी, अंजु पुनिया एवं नीरज अरोड़ा
पशु शल्य चिकित्सा एवं विकिरण विभाग
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

घोड़ा एक स्तनधारी जानवर है एवं विश्वभर के प्रत्येक कोने में पाया जाता है। घोड़ा मुख्य शाकाहारी भोजन ग्रहण करता है तथा इनका जीवन काल लगभग 20 से 25 वर्ष होता है। घोड़ों में होने वाली सबसे आम असामान्य स्थितियों में पेट दर्द एवं पानी की कमी शामिल है। लंबे समय तक पेट दर्द रहने पर घोड़ों का स्वास्थ काफी गिर जाता है। इस स्थिति में घोड़ा ठीक ढंग से खड़ा नहीं हो पाता और अपने पेट की तरफ लात चलाता है एवं खाना-पीना बंद कर देता है तथा मल त्याग नहीं कर पाता है।

घोड़ों में पेट की परेशानी के लिये जिम्मेदार मुख्य कारण इस प्रकार है-

1. आतों का अपनी धुरी पर घूम जाना
2. अनुचित भोजन एवं कम पानी का सेवन करना
3. आतों के परजीवी का होना
4. गैस निकलने में बाधा
5. कुछ नस्लों में इक्वाईन शुल अनुवांशिक तौर पर ज्यादा पाया जाता है

इक्वाईन शुल के विशिष्ट लक्षण:

1. घोड़े का खाना-पीना बंद हो जाना
2. गर्दन पीछे करके पेट की तरफ देखना
3. पेट की तरफ लात चलाना
4. मल त्याग ना कर पाना
5. अत्याधिक पसीना आना
6. दीवार की सतह पर खुर से मारना

इक्वाईन शुल की निदान विधियां:

1. घोड़े के मालिक से पशु चिकित्सक द्वारा एकत्र किया गया इतिहास उसके उपचार मे मदत करता है।
2. शारीरिक परीक्षण
3. रक्त रसायनिक विश्लेषण
4. अल्ट्रासोनोग्राफी द्वारा पेट का विश्लेषण
5. दर्दनिवारक दवाओं का प्रयोग
6. एनिमा की सहायता से मल त्याग करने में घोड़े की मदद करना
7. द्रव की मदद से पुनर्जलिकरन करना
8. शुल मिश्रण को पेट में नली के द्वारा डालना
9. सर्जरी की मदत से शुल की मुख्य वजह को हटाना

इक्वाईन शुल के रोकथाम के तरीके:

1. घोड़े के भोजन से गंदगी एवं रेत को बाहर निकालना
2. नियमित भोजन के अंदर अचानक बदलाव ना करना
3. नियमित रूप से क्रिमी मुक्ति और दंत चिकित्सा की मदद से दांतों की देखभाल रखना
4. पर्याप्त रूप एवं अनुपात भोजन सामग्री नियमित रूप से घोड़े को देना
5. नियमित रूप से जल का सेवन करवाना
6. नियमित रूप से डिवर्मिंग करना

घोड़ों मे पेट का दर्द सबसे आम बिमारी है जो इस जानवर में उच्च रूग्णता और मृत्यु दर को बढ़ा देती है। घोड़े अन्य प्रजातियों की तुलना में पेट के दर्द से अधिक संवेदनशील होते हैं, इसलिये घोड़े की गुणवत्ता बढ़ाने के लिये शुल के कारणों, संकेतों, निदान, उपचार एवं रोकथाम को समझना महत्वपूर्ण है। इसलिये पशुपालक भाइयों को यह सलाह दी जाती है कि घोड़ों में प्रभावी परजीवी नियंत्रण के लिये नियमित रूप से डीवर्मिंग का अभ्यास किया जाना चाहिये एवं सभी कारणों और पूर्वगामी कारकों से बचना चाहिये जो घोड़ो में पेट दर्द की घटना के लिये जिम्मेवार है।

मक्का- एक महत्वपूर्ण चारा फसल

सतपाल
चारा अनुभाग, आनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग,
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, हरियाणा

भारत जैसे कृषि प्रधान देश की अर्थव्यवस्था में पशुधन एवं पशुपालकों का महत्वपूर्ण स्थान है। देश के ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे 70-80 प्रतिशत ग्रामीणों के लिए पशुपालन आज भी उनकी आजीविका का आधार है। पशुओं के अच्छे स्वास्थ्य व अधिक पशु उत्पादन (मांस, दूध इत्यादि) प्राप्त करने के लिए गुणवत्तापूर्ण हरे चारे की उपलब्धता अत्यावश्यक है। चारा फसलों में मक्का गर्मी व खरीफ मौसम की एक महत्वपूर्ण फसल है। हरा व मीठा चारा, शीघ्र बढ़ने की क्षमता और अधिक चारा उत्पादन का गुण मक्का को आदर्श चारा फसल बनाता है। अन्य चारा फसलों की तुलना में, यह बहुत तेजी से बढ़ती है। मक्का के हरे चारे में पौष्टिकता की दृष्टि से प्रोटीन (8 से 12 प्रतिशत), फाइबर (30 से 32 प्रतिशत) और लिग्निन (5 से 6 प्रतिशत) पाए जाते हैं जो अन्य चारों की अपेक्षा इसकी पाचन क्रिया, स्वादिष्टता एवं पशु स्वास्थ्य को बनाए रखने में अधिक उपयोगी होते हैं। मक्का अधिक हरा चारा प्रदान करती है, साथ ही इसमें अधिक पत्ते होने से पत्ते व तने का अनपात भी अधिक होता है जिससे इसके हरे चारे में प्रोटीन सामग्री अधिक होने से स्वादिष्टता व सुपाचकता और भी बढ़ जाती है। गर्मियों व खरीफ के सीजन के लिए मक्का एक सुरक्षित का चारा है क्योंकि इसमें धुरिन नहीं होता है। इसे हरे या सूखे रूप में खिलाया जा सकता है और यह साइलेज बनाने के लिए भी सबसे उपयुक्त फसल है।

मक्का की उन्नत किस्में: अफरीकन टाल, विजय, मोती, जवाहर कंम्पोजिट, प्रताप मक्का चरी-6, जे-1006, जे-1007 एवं जे-1008

मिट्टी व खेत की तैयारी: मक्का की काश्त के लिए दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त होती है। खेत की बढ़िया तैयारी के लिए 2-3 जुताइयां काफी हैं। दो क्रॉस हैरोइंग और लेवलिंग के बाद मिट्टी को पलटने वाला एक ऑपरेशन एक खरपतवार मुक्त और समतल खेत प्राप्त करने के लिए पर्याप्त है। यह पानी के ठहराव और सूखे के प्रति अति संवेदनशील है।

बिजाई का समय: गर्मियों में मक्का की बुआई मार्च महीने के दूसरे पखवाड़े से लेकर अप्रैल के आखिरी सप्ताह तक कर सकते हैं जिससे इसका हरा चारा चारे की कमी वाले समय में उपलब्ध हो जाता है। खरीफ के सीजन में मक्का की बिजाई जून के दूसरे पखवाड़े से जुलाई के प्रथम पखवाड़े के दौरान पूरी कर लेनी चाहिए।

बीज की मात्रा व बिजाई का ढंग: फसल की बीज दर बीज के आकार पर निर्भर करती है। मक्का एक बड़े आकार की बीज वाली फसल है और इसलिए, आमतौर पर एक एकड़ में पौधों की उचित संख्या व बढ़वार के लिए 28-32 किलोग्राम बीज दर की सिफारिश की जाती है। बीज को 30 सेंमी. पंक्ति से पंक्ति का फासला रखकर लाइनों में बोना चाहिए।

उर्वरक प्रबन्धन: गुणवत्तापूर्ण व अधिक चारा पैदावार के लिए 32 कि.ग्राम नाइट्रोजन व 16 किलोग्राम फास्फोरस प्रति एकड़ डालें। फास्फोरस की पूरी मात्रा (100 किग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट) तथा 16 किग्रा. नाइट्रोजन (35 किग्रा. यूरिया) बिजाई के समय डालें तथा शेष 16 किलोग्राम नाइट्रोजन (35 किग्रा. यूरिया) बुआई के 25-30 दिन बाद डालें। मिश्रित खेती में उर्वरक फसल की सिफारिश के अनुपात में ही डालें।

निराई-गुड़ाई: फसल की अधिक बढ़वार के लिए तथा खरपतवारों की रोकथाम के लिए बुआई के 20-25 दिन बाद एक निराई- गुड़ाई पहली सिंचाई देने के बात बतर आने पर करें।

सिंचाई और जल निकास: मार्च-अप्रैल में बोई गई फसल में पहली सिंचाई बिजाई के 15-20 दिन बाद करें। आगे की सिंचाइयां 12-15 दिन के अन्तराल पर करें। यह फसल पानी के ठहराव और नमी के तनाव के लिए अति संवेदनशील है। खरीफ के सीजन में सिंचाई मानसून के अनुसार आवश्यकता के अनुसार एक से दो सिंचाई फसल के लिए फायदेमंद होती है।

कटाई व चारे की पैदावार: हरे चारे की अधिक पैदावार प्राप्त करने के लिए, फसल की कटाई रेशम से दूधिया अवस्था (बुआई के 60-65 दिन बाद) के दौरान करें। समय से पहले कटाई करने से यद्यपि अच्छी गुणवत्ता वाले चारे का उत्पादन करती है लेकिन चारे की पैदावार कम हो जाती है, जबकि देर से कटाई के कारण चारे की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसके हरे चारे की पैदावार लगभग 180-250 क्विंटल प्रति एकड़ है।

पशुधन के लिए चरागाह एवं उसका रखरखाव

पवन कुमार[1] एवं करन महर[2]
भा.कृ.अनु.प.- भारतीय पशुचिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर, बरेली
भा.कृ.अनु.प.- राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल, हरियाणा

परिचयः वर्तमान में पूरे विश्व में कुल धरातल का बहुत कम प्रतिशत ही चारागाह बचा है, वहीं पर चारागाह, भूमिविहिन किसानों तथा पूर्ण रूप से पशुओं पर निर्भर चरवाहों के लिए एक विशेष भूमिका अदा करता आ रहा है। वर्तमान समय में चारागाह के विनाश के साथ-साथ पशुओं पर निर्भर समुदायों एवं बहुत महत्वपूर्ण घास की प्रजातियों का भी विनाश हो रहा हैं। चारागाह स्थलों का भारत में लगातार क्षेत्रफल कम होता जा रहा है। शोधकर्ताओं के अनुसार भारत में चारागाह में चराई पर आधारित पशुपालन का ग्रामीण अर्थव्यवस्था में मुख्य भूमिका है तथा यहां का लगभग 20 पशुधन संख्या चराई पर निर्भर हैं। जबकि कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 3.3 प्रतिशत (102.6 लाख हैक्टेयर) चरागाह ही चरवाहों के लिए उपलब्ध हैं और ये संख्या लगातार बढ़ती जा रही हैं। शोधकर्ताओं के अनुसार भारत की पश्चिमी तथा उत्तरी भाग के पहाड़ी शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्र के लगभग 30 घुमक्कड़ पशुपालन समुदाय के साथ-साथ शीतोष्ण क्षेत्र की 20 समुदाय पूर्ण रूप से पशुपालन के लिए चारागाहों पर निर्भर हैं। चारागाह का महत्व विशेष रूप से सूखे क्षेत्रों में छोटे पशुओं जैसे भेड़ों एवं बकरियों के लिए बहुत अहम भूमिका है। शोधकर्ताओं के अनुसार भारत में पशुओं को चराने की तीन प्रमुख प्रणालियों (चारागाहों में चराई, थान पर चराई एवं मिश्रित चराई) में सबसे ज्यादा मुक्त खुली जगह पर चराया जाता है।

चारगाहों की चरा का पशुओं के स्वास्थ्य एवं उत्पादन पर प्रभावः शोधकर्ताओं के अनुसार चरागाह पशुओं की चारागाहों में चराई से पशुओं के कल्याण में सहायक है तथा जो पशु चारागाहों में चराई करते थे उनमें पैरों तथा जोड़ों से सम्बन्धित विकार, थनैला रोग, बच्चेदानी सम्बन्धित रोग, मृत्यु दर, चारगाहों में चराई करने वाले पशुओं में बन्द पशुआलय वाले पशुओं की तुलना से कम मिले एवं चारगाहों में चरा करने वाले पशुओं द्वारा मुक्त रूप से अपना व्यवहार प्रकट कर सकती है। चारगाहों पर चराई करने वाले पशुओं में पोषण तत्वों की पूर्ति प्रमुख समस्या है। यह समस्या और बढ़ जाती है जब चराई वाले पशुओं की संख्या प्रति इकाई चारागाहों भूखण्ड में बढ़ जाती हैं। शोधकर्ताओं के अनुसार पशुओं की संख्या प्रति इकाई चारागाहों भूखण्ड पर सुव्यवस्थित नियोजन पशुओं में पोषण तत्वों की आवश्यकता की पूर्ति एवं पशुओं से उत्पादन के साथ-साथ चारागाहों के उत्पादकता में वृद्धि में सहायक हैं।

चारागाहों चराई का वातावरण एवं पारिस्थिति पर प्रभावः

चारागाहों का सतत एवं टिकाऊ उत्पादन तथा उनका नियोजन न केवल किसानों एवं पशुओं के लिये लाभकारी हैं। बल्कि यह पर्यावरण के संरक्षण के लिये अति महत्वपूर्ण है। प्राकृतिक चारागाह/घास स्थल कई वन्य जीवों के संरक्षण में भूमिका है। शोधकर्ताओं के अध्ययन के अनुसार अधिक चारागाह वाले क्षेत्र में मधुमक्खियों की संख्या तथा मधुमक्खियों में विभिन्नता कम चारागाह वाले क्षेत्र से अधिक पाई गई जिनकी परागण के लिये अहम है। प्राकृतिक चारागाह/घास स्थल कई पादप प्रजातियों को भी संरक्षण प्रदान करता है। उदाहरण के अनुसार हिमालय के अल्पाइन चारागाहों में उच्च स्तरीय औषधिय पादपों, सुगंधित पादप तथा अन्य पादपों की प्रचुरता के कारण इस क्षेत्र को पादपों का संग्रहालय भी कहा जाता है। अत्यधिक कृषि तथा कृषि के विस्तारीकरण से चारागाहों की संख्या में कमी हुई है। जो कि पारिस्थितिकी में अस्थिरता का प्रमुख कारण है। भारत के कुछ महत्वपूर्ण परंपरागत चरागाह एक अनूठे धरोहर की तरह लम्बे समय से संजोये हुए हैं।

महत्वपूर्ण घास स्थल	स्थान
रेगिस्थान (सेवण) घास स्थल	राजस्थान का शुष्क क्षेत्र
बन्नी घास स्थल	गुजरात
सेला घास स्थल	नीलगिरी
रोलापडु घास स्थल	आन्ध्रप्रदेश का अर्धशुष्क क्षेत्र
डक्कन के अर्धशुष्क घास स्थल	डक्कन क्षेत्र
अल्पाइन घास स्थल	आसाम एवं पश्चिमी हिमालय क्षेत्र

इसके अलावा भारत में कई ऐसे भी परंपरागत चारागाह है जिनका विशेष रूप से वहां के लोगों द्वारा पवित्र स्थलों के रूप में संरक्षण किया जा रहा है। जैसे राजस्थान के ओरण, हिमाचल के देवदार देववन, केरल के केवुस, मेघालय के लॉ केन्तांग तथा उत्तराखण्ड के हरियाली इत्यादि पवित्र उपवन चरवाहों के लिए आजीविका देने के साथ–साथ ये भारत की महत्वपूर्ण जैव विविधता धरोहर को भी संरक्षित किये हुए हैं।

भारत के परंपरागत चारागाह के संरक्षण का महत्वता:

कम होती चारागाहों के क्षेत्रफल के साथ–साथ चारागाहों की गुणवता में भी कमी आ रही है जिससे चारागाह पर खरपतवार और खराब गुणवत्ता वाली घासों का अतिक्रमण हो रहा है जोकि अंन्ततः पशुओं के स्वास्थ्य एवं उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव के साथ–साथ चारागाहों के क्षय का कारण बनती जा रही हैं। भारत के अधिकांश भागों के चारागाहों की प्राथमिक उत्पादकता विश्व की औसतन चारागाहों के उत्पादकता से बहुत कम हैं। शोधकर्ताओं के अनुसार भारत में न्यूनतम चारागाहों की उत्पादकता रेगिस्तान क्षेत्र में 0.1 टन प्रति हैक्टेयर प्रति साल तथा अधिकतम उष्ण घास मैदानों में 16 टन प्रति हैक्टेयर प्रति साल पाई जाती हैं। भारत के अधिकांश चराई के मैदानों में घास का उत्पादन मानसून के 4 से 5 महिनों द्वारा निर्धारित किया जाता है।

चारागाह/घास स्थल के संरक्षण एवं सुधार के लिए महत्वपूर्ण रणनीतियां:

चारागाहों की सुरक्षा: पशुओं के चराई का खराब नियोजन जैसे निम्न गुणवत्ता वाली घासों का अतिक्रमण असुरक्षित खुले चारागाहों पर पशुओं का अनियर्तित चरण, चारागाहों पर अतिक्रमण, उपयुक्त उर्वरकों की कमी लेग्युम घासों की कमी तथा चारागाहों पर खरपतवारों की अति वृद्धि चारागाहों क्षरण तथा उनके कम उत्पादकता के प्रमुख कारक हैं। अतः चारागाहों के अति दोहन तथा क्षरण को रोकने के लिये चारागाहों की सुरक्षा एक महत्वपूर्ण कदम है। वर्तमान समय में यह महत्वपूर्ण हो जाता है कि चारागाहों का सतत एवं टिकाऊ उत्पादन तथा उनका नियोजन प्रत्येक किसान उपयोग में लाए।

प्रमुख रणनीतियां:

क) **बाड़ या तारबंदी**– सामान्यतः चारागाहों की सुरक्षा के लिए कांटेदार तार, सीधे तार, प्लास्टिक के तार को लोहे, लकड़ी, सीमेंट एवं प्लास्टिक के खम्भों से बांधकर तथा जीवित या जैविक बाड़ जैसे कांटेदार पौधों बबूल, थोर, कैक्टस इत्यादि उपयोग में लिया जा रहा है। अतिचरन पर रोक एवं चारागाहों के कुशल उपयोग के लिए भारत के क्षेत्रों के कई समुदायों में सामाजिक बाध्यताओं द्वारा चारागाहों निगरानी प्रणाली विकसित की जाती हैं, जैसे कि ओरण या गौचर भूमि के गलत उपयोग पर, सामाजिक दण्ड का प्रावधान, पशुधन चराई पर विशेषकर प्रणाली इत्यादि प्रावधान शामिल हैं जिन्हें सामाजिक तारबंदी या सोसीयल तारबंदी भी कहते हैं। चारागाहों के चौतरफा खाई बनाकर चारागाहों सुरक्षा के साथ–साथ यह एक जल संरक्षण माध्यम की तरह भी काम करता है।

ख) **खरपतवारों की अति वृद्धि पर नियत्रंण**– सामान्यतः खरपतवारों का नियत्रंण भौतिक, रासायनिक, जैविक रूप से किया जाता है। भौतिक रूप से खरपतवारों का नियत्रंण मुख्यतः खरपतवारों को हाथ से उखाड़ कर, दताली तथा विभिन्न यांत्रिकी यंत्रों से वही रासायनिक रूप से खरपतवारों का नियत्रंण विभिन्न प्रकार के कार्बनिक, अकार्बनिक (खरपतवार विशेष खरपतवारनाशी एवं जैविक नीम जल घोल, अजैविक रासायन प्रमुख हैं, वही जैविक रूप से खरपतवारों का नियत्रंण, विभिन्न प्रकार के खरपतवारनाशी जैविक घटक जैसे खरपतवारनाशी किट एवं जीवाणु शामिल हैं।

ग) **चारागाहों के पुनर्जनन के लिए स्थानीय एवं उच्च गुणवत्ता वाली चिरस्थायी घासों की बुआई**– स्थानीय एवं उच्च गुणवत्ता वाली चिरस्थायी घासों के बीजों का चयन कर कृषि जलवायु के अनुसार उनकी बुआई तथा उचित खाद एवं उर्वरक का उपयोग करके चारागाहों के उत्पादन तथा गुणवत्ता में सुधार किया जा सकता है।

घ) **जैविक खाद, वर्मीकम्पोस्ट, पशुओं के बाड़े की खाद, हरी खाद**– चारागाह भूमि की पोषण क्षमता में सुधार के लिये विभिन्न प्रकार के जैविक खाद जैसे जैव उर्वरक, वर्मीकम्पोस्ट, पशुओं के बाड़े की खाद, हरी खाद ढैंचा पादप, ऐजौला, सन आदि चारागाहों के सतत एवं टिकाऊ विकास के लिये महत्वपूर्ण है।

ङ) **पशुओं के उचित चराई नियोजन**– भारत के अधिकांश

जगहों पर पशुओं का बिना किसी बाध्यता के चराई की जाती है। परन्तु चारागाह के संरक्षण के लिये, नियंत्रित चराई के विभिन्न उचित तरीकों जैसे आवर्ती चराई, आस्थगित चराई, आवर्ती आस्थगित चराई आदि से चारागाह पर अनियंत्रित चराई से बचा जा सकता है। चराई के इस विशिष्ट तरीके में पशु आवर्तीत रूप से निश्चित अन्तराल में एक चारागाह भूखण्ड से दूसरे चारागाह भूखण्ड में चराई की जाती है। आवर्ती चराई प्रणाली से चारागाहों का सतत एवं टिकाऊ उत्पादन, घास उत्पादन लागत में कटौती के साथ-साथ पशुओं के स्वास्थ्य तथा प्रदर्शन में भी सुधार कर सकते हैं। जबकि आस्थगित चराई प्रणाली में पशुओं द्वारा चराई घास के उचित वृद्धि के बाद अनुमित किया जाता है।

चारागाह/घास स्थल का भारत में योगदानः

ज्यादातर भेड़ एवं बकरी पालक जमीनविहिन किसान तथा घुमक्कड़ पशुपालन समुदाय के लोग पूर्णतयः अपने आय एवं जीवनशैली के लिए पशुओं के पालन तथा चारागाह पर निर्भर रहते हैं। भारत के प्रमुख घुमक्कड़ पशुपालन समुदाय निम्नलिखित हैं-

घुमक्कड़ पशुपालन समुदाय	क्षेत्र	प्रधान पशुधन पालन
गद्धी, बखरवाल, किन्नोर	हिमाचल प्रदेश, जम्मू एवं कश्मीर	भेड़ एवं बकरी
भोटिया	उत्तराखण्ड, गढ़वाल, उत्तरी कुमाउं क्षेत्र	बकरी एवं गाय
भुटिया	उत्तरी सिक्किम	भेड़, बकरी एवं गाय
भरवाड़	गुजरात	भेड़, बकरी एवं गाय
रेवाड़ी/राइका सिन्धी मुसलमान	राजस्थान, गुजरात	भेड़, बकरी, गाय एवं ऊंट
धंगर	महाराट्र, कर्नाटक, मध्यप्रदेश	भेड़

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

पशुपालन सम्बंधी जानकारियाँ पाएँ

निःशुल्क SMS (मैसेज) द्वारा

पंजीकरण हेतु- 930-000-0857

(पशुपालक कॉल सेन्टर)

(सुबह 10 से 1 बजे तक) पर कॉल करें।

हरा और पौष्टिक चारा वर्षभरः जानिए कैसे?

श्रेया, सत्यवान आर्य, रवीश पंचटा एवं सतपाल
चारा अनुभाग, आनुवांशिकी व पौध प्रजनन विभाग
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, हरियाणा

डेयरी उद्योग ऐसा कृषि व्यवसाय है जो राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में 5 प्रतिशत का योगदान देता है और 8 करोड़ से अधिक किसानों के रोजगार का साधन है। फसल उत्पाद और डेयरी उद्यम का एक सुगठित संयोजन है जिसका उद्देश्य खेत और परिवार की जरूरतों को पूरा करना और उप–उत्पादों और फसल अवशेषों का कुशलतापूर्वक उपयोग करना है। भारत में दुनिया की पशुधन आबादी का लगभग 15% और दुनिया के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 2% हिस्सा है, जो भूमि पर भारी जैविक दबाव यानी बायोटिक प्रेशर का संकेत देता है। वर्तमान में भारतीय पशुधन की आबादी 535 मिलियन से अधिक है जो वर्ष 2050 तक लगभग 780.7 मिलियन तक पहुंच जाएगी। भारत में कुल खेती योग्य क्षेत्र में से, केवल 4% भूमि का उपयोग चारा उत्पादन के लिए किया जाता है। चारा लागत पशुधन उत्पादन की कुल लागत का लगभग 70–75% है, खासकर दुधारू पशुओं में। अनाज के मुख्य उत्पादन के फलस्वरूप ग्रामीण परिवेश में पशुओं को केवल सूखे चारे जैसे कड़बी, भूसा आदि पर निर्भर रहना पड़ता है जिनमे कार्बोहाइड्रेट को छोड़कर अन्य आवश्यक पोषक तत्त्वों का नितान्त अभाव रहता है। इससे उनकी उत्पादन क्षमता एवं काम करने की क्षमता पर दुष्प्रभाव पड़ता है। इसके आलावा वर्ष के कुछ महीने जैसे मई–जून व नवंबर–दिसंबर में हरे चारे का सामन्तया आभाव रहता है। यदि वैज्ञानिकों द्वारा परियोजित चारा फसल चक्र का उचित रूप से पालन किया जाए तो इन महीनों में भी पशुओं को हरा चारा उपलब्ध कराया जा सकता है। इसलिए पशुधन पालन से लाभ बढ़ाने के लिए, हरे और पौष्टिक चारे के उचित समावेश के साथ उचित आहार रणनीतियों का पालन करने की आवश्यकता है।

सफल पशुधन व्यवसाय के लिए वर्ष भर हरा चारा उत्पादन अत्यंत आवश्यक है। उत्तर भारत में फसल चक्र के अनुसार चारा फसलों को दो श्रेणियों में बांटा गया है।

खरीफ मौसमः ज्वार, बाजरा, मक्का, संकर हाथी घास, ग्वार, मीठी सूडान एवं लोबिया

रबी मौसमः बरसीम, जई, रिजका एवं चाइनीज सरसों

सीमित प्राकृतिक संसाधनों का सक्षम उपयोग करते हुए वर्ष पर्यन्त पौष्टिक हरा चारा उत्पादन के लिए प्रमुख चारा फसल चक्र कुछ इस प्रकार हैं–

1. मक्का+लोबिया (गर्मियों में)– ज्वार+लोबिया (खरीफ में) जई
2. बाजरा+लोबिया (गर्मियों में)– ज्वार+लोबिया (खरीफ में) जई
3. संकर हाथी घास+लोबिया (गर्मियों में) + लोबिया (खरीफ में)– बरसीम + चाइनीज सरसों
4. मीठी सूडान/ज्वार– बरसीम + चाइनीज सरसों
5. संकर हाथी घास + रिजका

चारा फसलों की उन्नत किस्में:

बरसीमः मैस्कावी, हरियाणा बरसीम 1, हरियाणा बरसीम 2

जईः एच एफ ओ 906, एच एफ ओ 607, ओ एस 403, एच एफ ओ 806, एच एफ ओ 611 एवं ओ एस 7 (एक कटाई वाली) एच एफ ओ 707, एच जे 8 एवं एच एफ ओ 114 (ज्यादा कटाई वाली)

ग्वारः एच एफ जी 156

लोबियाः सी एस 88

ज्वारः एच जे एच 1513, एच जे 1514, सी एस वी 53, एच जे 541, एच जे 513, एस एस जी 59 –3

बाजराः एच सी 10, एच सी 20, जायंट बाजरा, राज बाजरा चरी 2

संकर हाथी घासः नैपियर बाजरा संकर 21

रिजकाः लूसर्न टी 9

चारा फसल सम्बंधित आवश्यक जानकारीः

- बाजरा, मक्का अदि के साथ लोबिया की बिजाई 2:1 अनुपात में की जा सकती है जिससे लोबिया के उत्पादन के साथ–साथ

अन्य फसलों के उत्पादन में वृद्धि होगी एवं मिट्टी की उपज शक्ति में भी सुधार होगा।

- संकर हाथी घास एक बहुवर्षीय फसल है। इसे मध्य फरवरी से मध्य मार्च में जड़ों व तनों द्वारा लगाया जाता है। इसके लिए हाथी घास की 8500 जड़ों की प्रति एकड़ जरूरत पड़ती है।
- सूडान घास या ज्वार (अधिक कटाई वाली) बीजने का उपयुक्त समय मध्य अप्रैल है। इसकी बिजाई 25 सेंमी. की दूरी पर लाइनों में पोरा या केरा द्वारा की जाती है।
- रिजका एक बहुवर्षीय फसल है जिसे मध्य अक्टूबर के आसपास लगाया जाता है। रिजका के लिए 4 किलो बीज प्रति एकड़ पर्याप्त रहता है।
- जई की बिजाई मध्य अक्टूबर के आसपास करें जिसके लिए 30–40 किलो बीज प्रति एकड़ जरूरत पड़ेगी।

खाद्यान्न फसलों के बीच के खाली समय में चारा उत्पादन की तकनीक

प्रायः उत्तर भारत में बरसात के पूर्व मई–जून में तथा बरसात के बाद अक्टूबर–नवम्बर में चारे की उपलब्धता में बहुत कमी होती है। चारे की इस कमी के समय को लीन पीरियड कहते है। इस समय चारे की कमी को पूरा करने के लिए निम्नलिखित उपाय किये जा सकते है:

1. रबी की फसल की कटाई के बाद (मई–जून) एवं खरीफ की फसल बोने से पहले शीघ्र तैयार होने वाली चारे की फसलें उगाई जानी चाहिए।
2. इस मौसम में चारे के लिए मक्का+लोबिया, चरी+लोबिया, बाजरा+लोबिया की मिलवां खेती से 250–300 क्विंटल हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है।
3. इसी प्रकार ज्वार, बाजरा या मक्का के काटने के बाद एवं गेहूं की बुआई के बीच भी काफी समय बचता है। इस समय शीघ्र तैयार होने वाली फसलों जैसे जापानी सरसों, शलजम आदि लगाकर हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है।

पौष्टिक हरे चारे के लिए मिश्रित खेती:

अधिकतर किसान हरे एवं सूखे चारे के लिए खेत के कुछ भाग में एक चारा फसल जैसे ज्वार, मीठी सुडान, मक्का, बाजरा आदि उगाते हैं। इन फसलों से पर्याप्त मात्रा में चारा तो प्राप्त होता है, परन्तु इनमें पोषक तत्त्वों का आभाव होता है। इनकी बजाय दलहनी फसलें जैसे लोबिया, ग्वार, बरसीम आदि का चारे के लिए उपयोग किया जाना चाहिए। एक दलीय फसलों की तुलना में दलहनी फसलों का चारा उत्पादन कम होता है। परन्तु इनमें प्रोटीन व अन्य पोषक तत्त्व प्रचुर मात्रा में होते हैं जिससे पशुओं को संतुलित आहार मिलता है। कृषि वैज्ञानिकों के अनुसार एक दलीय एवं दलहनी चारा फसलों को मिश्रित अथवा 2:2 कतार अनुपात रूप में बोने से अधिक मात्रा में पौष्टिक हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है। शोध परीक्षणों से ज्ञात हुआ है कि खाद्यान्न के लिए उगाई जाने वाली ज्वार, मक्का या बाजरा की दो कतारों के मध्य रिक्त स्थान में लोबिया की एक कतार लगायी जाए और 40–45 दिन पर उसकी कटाई कर ली जाए तो ज्वार की पैदावार बढ़ने के साथ–साथ लगभग 100 क्विंटल प्रति हैक्टेयर लोबिया से हरा चारा प्राप्त हो जाता है। इसके अलावा भूमि की उर्वरा शक्ति में भी सुधार होता है।

930-000-0857

whatsapp

लुवास पशुपालक हेल्पलाइन नम्बर

घोड़ों की उम्र उनके दांतों से निर्धारित करना

दिशांत सैनी, अंजु पुनिया एवं नीरज अरोड़ा
पशु शल्य चिकित्सा एवं विकिरण विभाग
लाला लाजपतराय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

कृषि पशुओं की आयु निर्धारित करने का महत्व:

खेत जानवरों का उत्पादक जीवन तुलनात्मक रूप से संक्षिप्त है उनकी उपयोगिता की ऊंचाई कुछ वर्षों तक सीमित है। इस कारण से, बढ़ती हुई उम्र के साथ पशुधन से प्रतिफल कम होता जाता है। इसलिए, जानवरों की उम्र ब्रीडर विक्रेता और खरीदार के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। शरीर के भीतर शारीरिक परिवर्तन निरंतर होते रहते हैं। वे सामान्य बाहरी रूप और स्वभाव को प्रभावित करते हैं और कुछ सीमाओं के भीतर केवल सामान्य रूप से युवा जानवर को परिपक्वता तक पहुंचने वाले या यहां तक कि एक पुराने जानवर की अनुमानित उम्र निर्धारित करने के लिए अलग करना मुश्किल नहीं है। दांतों में होने वाले परिवर्तन से घोड़ों की उम्रको निर्धारित करना आसान हो जाता है। जिस उम्र में दांत दिखाई देते हैं अस्थायी या दूध के दांत निकलने का समय और स्थायी दांतों के साथ उनके प्रतिस्थापन का समयऔर प्राकृतिक पहनने से होने वाले रूप में परिवर्तन के ज्ञान के साथ खेत जानवरों की अनुमानित उम्र निर्धारित की जा सकती है।

घोड़ा : परिपक्व नर घोड़े के 40 दांत होते हैं। इनमें से चौबीस दांत ग्राइंडर हैं, 12 कृन्तक या सामने के दांत हैं और 4 टुश या नुकीले दांत हैं। 2 केंद्रीय कृन्तकों को केंद्रीय या निपर्स के रूप में जाना जाता है। अगले 2, 1 निप्पर्स के प्रत्येक तरफ, मध्यवर्ती या मध्य कहा जाता है, और अंतिम, या बाहरी जोड़ी, कोने। टहनियाँ कृन्तकों और दाढ़ों के बीच स्थित होती हैं। वे आम तौर पर घोड़ी में मौजूद नहीं होते हैं और तदनुसार उसे पुरुष के रूप में 40 के बजाय कुल 36 दांत माना जा सकता है। युवा जानवर, चाहे नर हो या मादा, के 24 अस्थायी दांत होते हैं, जिन्हें आमतौर पर दूध के दांत कहा जाता है, क्योंकि वे स्थायी दांतों की तुलना में बहुत अधिक सफेद होते हैं। इन दूध के दांतों में 12 कृन्तक और 12 दाढ़ होते हैं। उत्तरार्द्ध ऊपरी और निचले जबड़े दोनों के प्रत्येक तरफ 3 पीछे के दांत हैं। दूध के दांतों को एक निश्चित अवधि के बाद स्थायी दांतों से बदल दिया जाता है, जो युवा बच्चों की उम्र निर्धारित करने में एक सूचकांक के रूप में काम करता है।

जन्म के समय: अस्थायी केंद्रीय कृन्तक या निपर्स दो संख्या में मौजूद हो सकते हैं अन्यथा वे जन्म के 10 दिन के बाद दिखाई देते हैं।

4 से 6 सप्ताह: दो अस्थायी मध्यवर्ती दांतों के वर्तमान ऊपरी और निचले हिस्से आ जाते हैं।

6 से 10 महीने: कोने या बाहरी कृन्तक, दो ऊपर और दो नीचे, काट दिए जाते हैं। इससे युवा जानवर को अस्थायी दांतों का एक पूरा सेट मिल जाता है।

एक वर्ष: केंद्रीय कृन्तकों के मुकुट टूट-फूट दिखाई देते हैं।

दो वर्ष: सभी अस्थायी दांत खराब हो जाते हैं।

ढाई साल: दूध के दांत निकलने लग जाते हैं।

तीन साल: अस्थायी केंद्रीय कृन्तकों को स्थायी दांतों से बदल दिया जाता है।

चार साल: चार अस्थाई मिडल की जगह चार स्थायी इंटरमीडिएट ले लेते हैं।

साढ़े चार वर्ष: चारों कोनों का झड़ना शुरू हो जाता है।

पांच साल के लिए अस्थायी कोने वाले दांतों को स्थायी दांतों द्वारा बदल दिया जाता है।

छह साल का घोड़ा: कोने के कृन्तक आसन्न दांतों के साथ एक स्तर पर होते हैं, जिसमें एक अच्छी तरह से चिह्नित दंत गुहा या 'कप' बन जाता है जो व्यावहारिक रूप से कोई पहनावा नहीं दिखाता है। निपर्स की पूरी सतह पर घिसावट आ जाती हैं।

सात साल: निपर्स के साथ-साथ मिडिल भी पहनते हैं। प्रत्येक ऊपरी कोने के दांत में संबंधित निचले दांत से पहनने के कारण एक इंडेंटेशन होता है, जिसके परिणामस्वरूप पीछे के किनारे का नीचे की ओर त्रिकोणीय प्रक्षेपण होता है। इस प्रक्षेपण को आमतौर

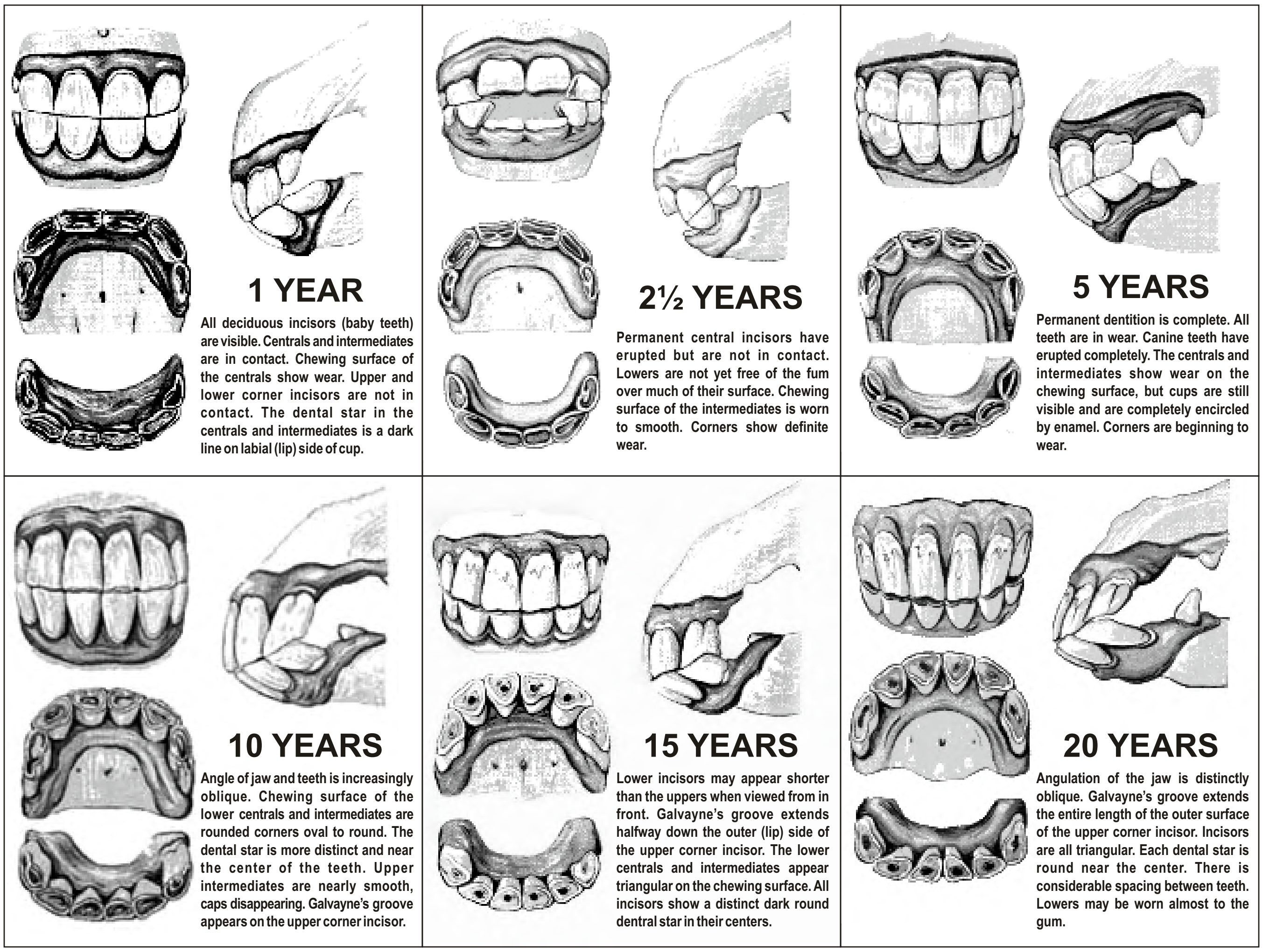

पर 'डोवेटेल' कहा जाता है।

आठ साल की उम्र: सभी कृन्तकों को पहना जाता है, कप पूरी तरह से निपर्स से गायब हो जाता है। लेकिन बीच में कुछ हद तक दिखाई देता है और अभी भी कोनों में अच्छी तरह से चिह्नित है। इस स्तर पर जिसे 'डेंटल स्टार' कहा जाता है, वह टेबल के सामने के किनारे के ठीक पीछे एक पीली अनुप्रस्थ रेखा के रूप में दिखाई देता है।

9 और 13 वर्ष: कृन्तकों की तालिकाओं के समोच्च में क्रमिक परिवर्तन होता है। ***9-वर्षीय:*** निपर्स वाले जानवर कम या ज्यादा गोल समोच्च पर ले जाते हैं। दंत गुहा या कप कोनों को छोड़कर सभी से गायब हो गया है। दंत तारा निपर और मध्य दोनों में पाया जाता है और पूर्व में तालिका के केंद्र के पास होता है।

10-वर्षीय: मध्य दांत गोलाकार हो जाते हैं और दंत तारा, जो अब सभी कृन्तकों पर दिखाई देता है, निपर्स और मध्य दोनो के केंद्र के पास है।

11 या 12 वर्ष: कोनों में कुछ गोल आकार होता है और दंत तारा तालिका के केंद्र तक पहुंचता है।

13 वर्ष की आयु: सभी निचले कृन्तकों को स्पष्ट रूप से गोल किया जाता है, सभी तालिकाओं के केंद्र में दंत तारा पाया जाता है, और तामचीनी के छल्ले जो पहले कपों को घेरते थे, पूरी तरह से गायब हो गए हैं।

14 वर्ष की आयु: केंद्रीय कृन्तकों की तालिकाएँ एक गोल से त्रिकोणीय समोच्च में बदलने लगती हैं।

15 वर्ष: मध्य के कृन्तकों की तालिकाएँ एक गोल से त्रिकोणीय समोच्च में बदलने लगती हैं।

16 या 17 वर्ष: कोने के कृन्तकों की तालिकाएँ एक गोल से त्रिकोणीय समोच्च में बदलने लगती हैं।

बाढ़ आपदा में डेयरी पशुओं

ज्योति शुन्थवाल*[1], देवेन्द्र सिंह[1] एवं सुजोय खन्ना[2]
[1]हरियाणा पशु विज्ञान केंद्र, महेंद्रगढ़, [2]हरियाणा पशु विज्ञान केंद्र, करनाल
लाला लाजपत राय पशुचिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

बाढ़ आपदा में डेयरी पशुओं का ध्यान रखना विशेष रूप से महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि वे आपके लिए संतुष्टिकर्ता का काम करते हैं। उन्हें सुरक्षित रखना और उनकी देखभाल करना आपके डेयरी उत्पादन के लिए अत्यंत जरूरी है। निम्नलिखित टिप्स आपको बाढ़ आपदा के दौरान डेयरी पशुओं के ध्यान रखने में मदद करेंगे–

1. **सुरक्षित स्थान उपलब्ध कराएं**– बाढ़ के समय खतरे के चलते पशुओं को सुरक्षित स्थान पर रखें। उन्हें अच्छे शेल्टर या स्थान दें, जो बाढ़ से बचाए रखेगा।
2. **पानी का संरचना करें**– डेयरी पशुओं को पानी की उचित व्यवस्था का सुनिश्चित करें। बाढ़ के समय, पानी बह सकता है और उन्हें उचित पीने का पानी उपलब्ध रखना महत्वपूर्ण है।
3. **भोजन की व्यवस्था करें**– डेयरी पशुओं को बाढ़ के समय सही और पौष्टिक भोजन उपलब्ध कराएं। उन्हें अच्छे ग्रेन्स, चारा, गन्ने आदि के साथ पौष्टिक आहार देना आवश्यक है।
4. **चिकित्सा की देखभाल**– बाढ़ के समय पशुओं को विशेष चिकित्सा की देखभाल की आवश्यकता होती है। उनके लिए बाढ़ के खिलाफ उचित टीकाकरण और इलाज उपलब्ध कराएं।
5. **साफ-सफाई का ध्यान रखें**– डेयरी पशुओं के ठिकानों को साफ सफाई रखना भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। वे स्वच्छ और सुरक्षित माहौल में रहने के लिए संबंधित स्थलों की साफ-सफाई करें।
6. **चेक-अप कराएं**– बाढ़ के बाद, पशुओं के स्वास्थ्य को पुनः समीक्षा करना महत्वपूर्ण है। उन्हें वेटरिनरियन की देखभाल में चेक-अप कराना सुनिश्चित करेगा कि वे स्वस्थ हैं और किसी भी बीमारी से प्रभावित नहीं हुए हैं।

बाढ़ आपदा के समय डेयरी पशुओं का ध्यान रखना जिम्मेदारीपूर्वक होता है और उनकी उचित देखभाल करने से आपके पशुओं को सुरक्षा मिलेगी और आपके डेयरी उत्पादन को भी नुकसान नहीं होगा।

बाढ़ आपदा में डेयरी पशुओं का ध्यान रखना विशेष रूप से महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि इस समय में वे जीवन की समस्याओं का सामना कर रहे होते हैं। निम्नलिखित टिप्स बाढ़ आपदा में डेयरी पशुओं के ध्यान रखने में मदद कर सकते हैं–

1. **सुरक्षा का ध्यान रखें**– बाढ़ आपदा के समय डेयरी पशुओं की सुरक्षा सबसे महत्वपूर्ण है। उन्हें उचित शेल्टर प्रदान करें जैसे कि स्थानीय प्राकृतिक आवास, बाड़ों, खड़ीब खेतों या पशुशाला में।
2. **उपयुक्त आहार दें**– डेयरी पशुओं को उचित और संतुलित आहार प्रदान करना आवश्यक है। उन्हें अधिक से अधिक पानी और फलीहुँडी जैसे पर्वतीय चारा देना चाहिए।
3. **स्वच्छता रखें**– पशुओं के आसपास की सफाई का खास ध्यान रखें। उनके रहने के स्थान को नियमित रूप से साफ और सुरक्षित बनाएं, ताकि उन्हें किसी भी संक्रमण का सामना न करना पड़े।
4. **स्वास्थ्य देखभाल**– डेयरी पशुओं के स्वास्थ्य का अच्छा ध्यान रखें। नियमित रूप से वेटरिनरी स्वास्थ्य चेकअप करवाएं और उन्हें उचित टीकाकरण दें।
5. **प्राकृतिक आपदा के लिए तैयारी**– डेयरी पशुओं के लिए आपदा प्रबंधन की योजना बनाएं। उन्हें आपदा से पहले सुरक्षित स्थान पर ले जाएं और उनकी सुरक्षा के लिए उपयुक्त सामग्री, खाद्य आदि इकट्ठी करें।
6. **समय-समय पर संपर्क बनाएं**– डेयरी पशुओं के साथ नियमित संपर्क बनाएं और उनका ध्यान रखें। वे आपके संगठन के अनुसार उनकी देखभाल, आहार, और सुरक्षा के लिए आपकी सहायता की आवश्यकता होगी।
7. **समय रहते सकारात्मक उपाय अपनाएं**– बाढ़ आपदा में डेयरी पशुओं को सकारात्मक उपायों से सामना करना पड़ सकता है। आपको उन्हें आपसी सहायता और समर्थन प्रदान करना होगा, ताकि उन्हें इस मुश्किल समय में सहायता मिल सके।

बाढ़ आपदा में डेयरी पशुओं का ध्यान रखना टीमवर्क और सहकार्य से होगा। इन टिप्स का पालन करके, आप अपने पशुओं की सुरक्षा और ध्यान रख सकते हैं और उनको बाढ़ आपदा से सफलतापूर्वक सामना करने में मदद कर सकते हैं।

*Corresponding Author: joykhanna20@gmail.com

डेयरी फार्म पर पानी की बचत करें: पर्यावरण बचाएं

ज्योति शुन्थवाल*[1], देवेन्द्र सिंह[1] एवं सुजोय खन्ना[2]

[1]हरियाणा पशु विज्ञान केंद्र, महेंद्रगढ़, [2]हरियाणा पशु विज्ञान केंद्र, करनाल

लाला लाजपत राय पशुचिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

पानी हमारे जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा है जो वनस्पतियों, पशुओं और लोगों के लिए अनिवार्य है। एक आम अनुमान है कि एक डेयरी फार्म पर 1 लीटर दूध उत्पादन के लिए लगभग 700 लीटर पानी की आवश्यकता हो सकती है। डेयरी फार्म में पशुओं की सेहत और उत्पादकता के लिए पानी का महत्वपूर्ण योगदान होता है। हालांकि, अक्सर यहां पानी के अव्यवस्थित उपयोग और व्यर्थ खर्च के कारण पानी का वेस्ट होता है, जो कृषि और पर्यावरण को प्रभावित कर सकता है। डेयरी फार्म में पानी की बचत करना महत्वपूर्ण है क्योंकि यह आपके उत्पादन, संचालन और पर्यावरण को प्रभावित करता है। निम्नलिखित तकीकों से पशुपालक डेयरी फार्म पर पानी की बचत करने के तरीकों के बारे में जान सकते हैं:

पानी की आवश्यकता का अनुमान: पानी की आवश्यकता का सही अनुमान लगाकर उसके अनुरूप प्रबंधन करना चाहिए। अधिक या कम पानी की आवश्यकता का अनुमान करके व्यर्थ खर्च से बचा जा सकता है।

पानी के स्रोत की जांच करें: अपने डेयरी फार्म पर पानी के स्रोत को जांचें और उन्हें सुनिश्चित करें कि कोई निस्तारण, रिसाव या विस्तारीय पानी की हानि नहीं हो रही है। लीकेज, टैप या पाइप की खराबी को तुरंत ठीक करें ताकि पानी की बर्बादी का कोई अवसर न हो।

आपूर्ति को नियंत्रित करें: पानी की बर्बादी को रोकने के लिए डेयरी फार्म पर पानी की आपूर्ति को नियंत्रित करें। धारण तालाबों या ओपन टैंकों के साथ निर्माण करें जो पानी के छिद्रण को कम करेंगे। साथ ही, आप पाइपलाइन प्रणाली का उपयोग कर सकते हैं ताकि पानी सीधे और उचित मात्रा में पहुंचे।

पानी का पुन:चक्रण करें: डेयरी फार्म पर पानी की बचत के लिए पानी का पुन:चक्रण करें। जिन प्रक्रियाओं में पानी का उपयोग होता है, जैसे कीटनाशक प्रयोग या वॉशिंग मशीन, उन्हें पानी के पुन:चक्रण के लिए अधिकतम उपयोग करें।

वायु निर्माण (evaporation) **को कम करें:** डेयरी फार्म पर पानी की बचत करने का एक अच्छा तरीका है वायु निर्माण को कम करना। पानी के छिद्रण को कवर करने, ओपन टैंक को ढकने और निर्माण में पाइपलाइन प्रणाली का उपयोग करने के माध्यम से आप पानी की बर्बादी को कम कर सकते हैं।

जल संरचना का उपयोग करें: डेयरी फार्म पर विभिन्न जल संरचनाओं का उपयोग करें जैसे कि तालाब, छत्त और रेनवॉटर हार्वेस्टिंग सिस्टम। इन संरचनाओं से वर्षा का पानी इकट्ठा करके आप पानी की बचत कर सकते हैं और खेती में उपयोग कर सकते हैं।

स्वच्छ और संग्रहीत पानी का उपयोग करें: डेयरी फार्म में पानी की बचत के लिए स्वच्छ और संग्रहीत पानी का उपयोग करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। पशुओं को केवल उन्हें जरूरत होने पर ही पानी प्रदान करें और अपशिष्ट पानी को संग्रहित करने के लिए उपयुक्त सुविधाएं स्थापित करें।

पानी के बारे में जागरूकता बढ़ाएं: अपने कर्मचारियों और डेयरी फार्म के अन्य सदस्यों को पानी की महत्वता के बारे में जागरूक करें। उन्हें पानी की बचत के लिए संचेतना बढ़ाने के तरीकों के बारे में शिक्षा दें और उनसे सहयोग करें।

पानी की बचत टेक्नोलॉजी का उपयोग करें: आधुनिक टेक्नोलॉजी का उपयोग करके आप पानी की बचत में सुधार कर सकते हैं। पानी की आपूर्ति को स्वचालित नियंत्रित करने वाली प्रणालियों, ड्रिप आवृत्ति प्रणालियों और पानी की बर्बादी को नियंत्रित करने वाले संवेदनशील उपकरणों का उपयोग करें।

डेयरी फार्म पर पानी की सही प्रबंधन से, पानी का व्यर्थ होने से बचा जा सकता है और फार्म की उत्पादकता को सुनिश्चित करने में मदद मिलती है। जिससे पर्यावरण की सुरक्षा के साथ साथ, कम पानी वाले क्षेत्रो में भी डेरी पशुपालन संभव हो सकता हैं।

*Corresponding Author: joykhanna20@gmail.com

डेयरी फार्म अपशिष्ट प्रबंधनः स्वच्छता के साथ उच्च उत्पादकता की ओर

ज्योति शुन्थवाल*[1], देवेन्द्र सिंह[1] एवं सुजोय खन्ना[2]
[1]हरियाणा पशु विज्ञान केंद्र, महेंद्रगढ़, [2]हरियाणा पशु विज्ञान केंद्र, करनाल
लाला लाजपत राय पशुचिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

डेयरी फार्म अधिकांश किसानों के लिए आर्थिक और सामाजिक उन्नति का एक महत्वपूर्ण साधन है। डेयरी उत्पादों की मांग बढ़ती जा रही है और इससे जुड़े उद्योग का विकास भी हो रहा है। भारतीय किसानों के लिए डेयरी उत्पादन एक महत्वपूर्ण आय स्रोत है। डेयरी फार्मों पर प्रतिदिन बड़ी मात्रा में अपशिष्ट उत्पन्न होती है, जो अगर सही ढंग से प्रबंधित नहीं की जाए, तो पर्यावरण पर हानिकारक प्रभाव डाल सकती है।

डेयरी फार्म अपशिष्टों का प्रबंधन एक व्यापक तथ्य है जो फार्म के सार्वजनिक स्वच्छता, पर्यावरण संरक्षण और उत्पादकता के साथ जुड़ा हुआ है। यह उपयुक्त तकनीकियों और अनुभव का उपयोग करके अपशिष्ट के प्रबंधन के माध्यम से किया जा सकता है। डेयरी फार्मरों के लिए अपशिष्ट प्रबंधन महत्वपूर्ण है ताकि वे अपशिष्ट को सुरक्षित रख सकें और पर्यावरण के साथ अच्छी तरह संगठित कर सकें। इससे हम वायु प्रदूषण को कम करते हैं, उत्पादन को बढ़ाते हैं और पृथ्वी को अधिक उपजाऊ बनाते हैं। कंपोस्ट मल पौधों के लिए पोषक और उर्वरक के रूप में काम करता है और भूमि को सुष्ठ बनाने में मदद करता है। यदि आप एक पशुधन फार्मर हैं और अपने अपशिष्ट से कंपोस्ट मल बनाने के तरीकों के बारे में अधिक जानना चाहते हैं, तो निम्नलिखित लेख पढ़ें–

1. **सही समय पर अपशिष्ट की संग्रहीति करें:** पशुधन फार्म पर अपशिष्ट की संग्रहीति को अच्छे से प्रबंधित करें। अपशिष्ट को निर्धारित स्थान पर संग्रहीत करें और उसे सुरक्षित रखें। इससे अपशिष्ट की संचयनीयता और गुणवत्ता में सुधार होगा। अपशिष्ट को एक अलग स्थान पर संग्रहित करने के लिए कंपोस्ट पिट, कंपोस्ट टावर, या कंपोस्ट बिन का उपयोग करें। इससे अपशिष्ट में पानी की मात्रा और बादबू को कम किया जा सकता है।
2. **उचित संश्लेषण करें:** अपशिष्ट को कॉम्पोस्ट मैन्योर बनाने के लिए आपको उचित संश्लेषण करना होगा। इसके लिए आप ब्राउन और ग्रीन मटेरियल का उपयोग कर सकते हैं। ब्राउन मटेरियल में सूखी पत्तियाँ, छाल, घास, बाल, या सुखी गोबर शामिल होता है, जबकि ग्रीन मटेरियल में हरा बर्न और खाद्य अपशिष्ट शामिल होता है। अपशिष्ट के प्रबंधन के लिए एक प्रबंधन प्रोटोकॉल तैयार करें और उसे सख्ती से पालन करें। सभी कर्मचारियों को उचित प्रशिक्षण और दिशा –निर्देश प्रदान करें ताकि वे अपशिष्ट के सही संग्रह, निपटान और प्रबंधन को समझें।
3. **बारीकी करें और मिश्रण करें:** संश्लेषण के बाद, अपशिष्ट को बारीकी करें और अच्छी तरह से मिश्रित करें। इसके लिए आप कंपोस्ट टर्नर का उपयोग कर सकते हैं ताकि अपशिष्ट को अच्छी तरह से फेर सकें और हवा की पहुंच को बढ़ा सकें।
4. **बनाएं कंपोस्ट पाइल:** अपशिष्ट को कंपोस्ट मल बनाने के लिए आपको एक कंपोस्ट पाइल तैयार करना होगा। इसके लिए आप एक उचित स्थान चुनें और उसमें अपशिष्ट को ठीक से मिश्रित करें। यहां आप बांध की ऊंचाई, विथाइट और लंबाई को विचार में रखते हुए कंपोस्ट पाइल बना सकते हैं।
5. **बायोगैस प्लांट स्थापित करें:** डेयरी फार्म अपशिष्ट से बायोगैस उत्पादित करने के लिए बायोगैस प्लांट स्थापित कर सकते हैं। यह उत्पादन के लिए अपशिष्ट का उपयोग करता है और साथ ही बायोगैस उत्पादन से आपको अतिरिक्त आय की संभावना होती है।
6. **नमी और हवा की पहुंच सुनिश्चित करें:** कंपोस्ट मल का नमी और हवा अवश्यक है ताकि उसमें अपशिष्ट का उचित उपयोग हो सके। यहां आपको कंपोस्ट पाइल को नमी और हवा से उचित ढंग से संतुलित रखने के लिए नियमित रूप से

*Corresponding Author: joykhanna20@gmail.com

पानी और हल्की हवा की आपूर्ति करनी होगी।

7. **जल संचय की व्यवस्था करें:** डेयरी फार्म के लिए पानी की संचय की व्यवस्था करें और उसे अपशिष्ट प्रबंधन के लिए उपयोग करें। आप अपशिष्ट को पानी के जलाशयों में संग्रहित करके प्रयोग कर सकते हैं, जिससे पानी की बचत होगी और वातावरण के लिए भी अच्छा होगा। इसके लिए एक जल संचय प्रणाली स्थापित करे, और डेयरी अपशिष्ट को उपयोगी जल स्रोत के रूप में पुनर्चक्रण कर सकते हैं, जिससे पानी की बचत होगी और पर्यावरण का संरक्षण होगा।

8. **कंपोस्ट मल की देखभाल करें:** कंपोस्ट मल की देखभाल करना महत्वपूर्ण है। इसे नियमित रूप से मिश्रित करें ताकि उसमें सभी अपशिष्ट बराबर रूप से विघटित हो सकें। आपको कंपोस्ट मल को बदलने, घुमाने और नमी की सामग्री को जांचने की जरूरत हो सकती है।

9. **नये और उन्नत प्रौद्योगिकियों का उपयोग करें:** नवीनतम और उन्नत प्रौद्योगिकियों का उपयोग करके अपशिष्ट प्रबंधन को सुगम और प्रभावी बनाएं। इंजीनियरिंग के नवीनतम उपकरणों, जैविक प्रबंधन संयंत्रों और दूसरे साधनों का उपयोग करें जो अपशिष्ट प्रबंधन में आपकी मदद कर सकते हैं।

10. **उत्पादन का उपयोग करें:** एक बार जब आपका कॉम्पोस्ट मैन्योर पर्याप्त रूप से परिपक्व हो जाए, तो आप इसे अपनी खेती में उपयोग कर सकते हैं। कंपोस्ट मल को पौधों के लिए उर्वरक के रूप में उपयोग करें। इसे खेती या उद्यानों में उपयोग करने से पौधों की वृद्धि में सुधार होगा और उत्पादकता में वृद्धि होगी। यह पृथ्वी को न्यूनतम नुकसान के साथ आपूर्ति करेगा और आपकी उपज को बढ़ाएगा।

अपशिष्ट से कॉम्पोस्ट मैन्योर उत्पादन करना पशुधन फार्मर्स के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। इससे वे पर्यावरण को संरक्षित रखते हैं, खेती का प्रदर्शन सुधारते हैं और अच्छी गुणवत्ता वाली उत्पादन करते हैं। ये सभी टिप्स डेयरी फार्मरों को अपशिष्ट प्रबंधन के लिए मार्गदर्शन प्रदान करेंगे। यदि आप इन टिप्स को सख्ती से पालेंगे, तो आप स्वच्छ डेयरी फार्मिंग के साथ-साथ उच्च उत्पादकता भी सुनिश्चित कर सकेंगे। डेयरी फार्म अपशिष्ट प्रबंधन अच्छी तरह से किया जाए तो यह पर्यावरण संरक्षण के साथ-साथ पशुपालक को भी लाभ प्रदान कर सकता है।

930-000-0857

whatsapp

लुवास पशुपालक हेल्पलाइन नम्बर

बछड़ों में होने वाली ग्रासनली की खांच की निष्क्रियता: दुष्प्रभाव एवं प्रबंधन

पार्थ देसाई, सरिता देवी एवं चित्रा चौहान
पशु औषधि विभाग, पशुचिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय
कामधेनु विश्वविद्यालय, सरदार कृषि नगर, गुजरात

प्रस्तावना:

'ग्रासनली की खांच' की दुष्क्रिया या निष्क्रियता (इसोफेगियल ग्रूव डिसफंक्शन) कम वय के रोमन्थी जानवरों (जुगाली करने वाले खुरधारी पशु) में अफरा चढ़ने (पेट फूलने की बीमारी) के प्रमुख कारणों में से एक माना जाता है। यह पशु शरीर में पोषण का पर्याप्त अवशोषण रोकता है और नवजात बछड़ों के विकास और स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव डाल सकता है, और यदि समय पर उपचार नहीं किया गया तो यह व्याधि जानलेवा भी साबित हो सकती है। इस लेख में 'ग्रासनली के खांच' की दुष्क्रिया के कारण बछड़ो में दुष्प्रभाव और असरकारक प्रबंधन के बारे में बताया गया है।

कुंजी शब्द: अफरा, ग्रासनली की खांच, बछड़ा, चतुर्थ आमाशय (ऐबोमैसम)

सामान्य पाचन प्रक्रिया:

नवजात बछड़े जन्म से लेकर अपने जीवन के पहले तीन सप्ताह तक पूर्व-रोमन्थी प्रावस्था में होते हैं। इस प्रावस्था में उनके पास वयस्क गायों की तरह चार पेट होते हैं, लेकिन रूमेन (प्रथम आमाशय) काफी छोटा एवं कम क्रियाशील होता है। इस समय में, पाचन तंत्र का प्रमुख हिस्सा चतुर्थ या सच्चा आमाशय (ऐबोमैसम) होता है, जो पाचन तंत्र का लगभग 70 प्रतिशत हिस्सा बनाता है। नवजात बछड़ों का पाचनतंत्र, सामान्य एक आमाशय वाले जानवरों की तरह काम करता है और वे मुख्य रूप से दूध या दूध के विकल्प पर निर्भर रहते हैं, जो कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन के सरल पाचन स्रोत हैं। स्वस्थ, दूध पीने वाले बछड़ों में, दूध को रूमेन और जालिका (रेटिकुलम या द्वितीय आमाशय) में बिना प्रवेश किये सीधा ऐबोमैसम में प्रवेश करना चाहिए, जहां दूध में मौजूद प्रोटीन को प्रभावी रूप से पचाया जा सके और उपयोग में लाया जाये। बछड़ों के रूमेन की दीवार में मांसपेशियों की एक परत विकसित होती है, जिसे ग्रासनली की खांच (इसोफेगियल ग्रूव) कहा जाता है जो बछड़ों द्वारा दूध पीने के दौरान एक उपमार्ग बनाता है जिससे दूध सीधा ऐबोमैसम में प्रवेश करता है। रेनिन बछड़े को दूध में मौजूद प्रोटीन को प्रभावी रूप से पचाने और उपयोग में सहायक होता है।

तीन से आठ सप्ताह की आयु के बीच, बछड़ा थोड़ी मात्रा में ठोस आहार ग्रहण करना शुरू करता है। आठ सप्ताह एवं अधिक आयु में, रोमन्थी पशुओं में रूमेन मुख्य पाचन अंग बन जाता है।

रोग की उत्पत्ति:

'ग्रासनली की खांच' की निष्क्रियता से दूध रूमेन और रेटिकुलम में प्रवेश करता है। दूध का रूमेन और रेटिकुलम में प्रवेश, बछड़े के लिए अनावश्यक और स्वास्थ्य के लिए खतरनाक होता है, जहां यह गलत ढंग से किण्वित (फरमेंट) होता है। इससे 15-30 मिनट के भीतर तीव्र और कभी-कभी घातक अफरा (ब्लॉट) और पेट दर्द उत्पन्न हो सकता है। लंबे समय तक यदि यह व्याधि चले तो, रुमेन का विकास अवरुद्ध हो जाता है और पाचन के असामान्य उत्पाद आंत में प्रवेश कर जाते हैं, जिससे दस्त की समस्या उत्पन्न हो सकती है। प्रभावित बछड़ों को दीर्घकालिक दर्द का अनुभव होता है, जिससे भूख, वृद्धि और विकास में रुकावट

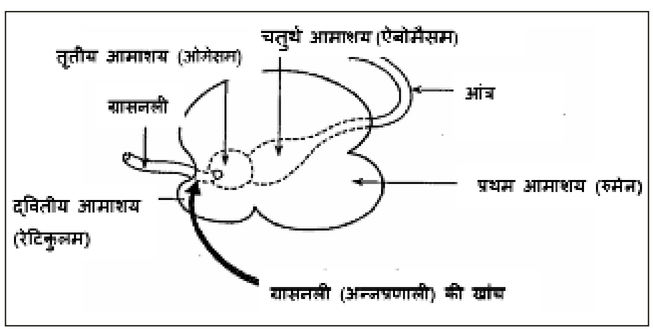

बछड़े के जठर तंत्र (आमाशय) का व्यवस्था चित्र

आती है। बछड़े की बाईं ओर का पेट आम तौर पर फूला हुआ दिखाई देगा। जो बछड़े धीरे–धीरे दूध पीते हैं उन में यह समस्या विकसित होने की संभावना अधिक होती है।

दुष्प्रभाव रोग के लक्षण:

- पेट का बायां भाग फूलना
- सांस लेने में कठिनाईय उथली सांस लेना
- नाड़ी और श्वसन दर में वृद्धि
- गंभीर पेट दर्द
- दस्त होना
- विकास में बाधा

उचित प्रबंधन:

- **बछड़ों को दूध पिलाने का सही तरीका:** गाय के थन की स्थिति इस प्रकार होनी चाहिए कि बछड़ों को दूध पीने के लिए पीछे खड़े होने के लिए पर्याप्त जगह मिले और ऊंचाई ऐसी होनी चाहिए कि नाक ऊपर हो और ग्रासनली (अन्न प्रणाली) कम से कम क्षैतिज हो।
- **सही ऊँचाई पर बाल्टी:** बाल्टी कम से कम 30 सेंटीमीटर की ऊंचाई पर होनी चाहिए ताकि दूध सीधे एबोमसम में जाए।
- **नियमित दूध पिलाना:** हर दिन दूध पिलाने का समय एक समान होना चाहिए और दूध उचित तापमान पर देना चाहिए।
- जैसे जैसे बछड़े बड़े होते हैं और व्यस्क अवस्था की और अग्रसर होते हैं 'ग्रासनली की खांच' चारा या आहार खाने के समय बंद हो जाती है जिसे सुचारू रुप से बंद होने के लिए इसलिए पौष्टिक और संतुलित आहार देना महत्वपूर्ण है।
- **तनाव मुक्त वातावरण:** तनावग्रस्त बछड़े खांचे को बंद करने में सक्षम नहीं होते, इसलिए उनके पहले आहार के रूप में इलेक्ट्रोलाइट तरल पदार्थ का उपयोग किया जाना चाहिए।
- **पशुचिकित्सक से संपर्क:** नवजात बछड़ो में असामान्य व्यवहार और दुष्प्रभाव दिखते ही तुरंत पशुचिकित्सक से संपर्क करना चाहिए।

निष्कर्ष

अन्नप्रणाली की खांच की निष्क्रियता को सही प्रबंधन और देखभाल से नियंत्रित किया जा सकता है। नियमित और सही तरीके से दूध पिलाना, तनावमुक्त वातावरण और उचित चिकित्सीय परामर्श इस स्थिति को रोकने और बछड़े के सही स्वास्थय एवं विकास में सहायक हो सकते हैं।

930-000-0857

whatsapp

लुवास पशुपालक हेल्पलाइन नम्बर

LALA LAJPAT RAI UNIVERSITY OF VETERINARY AND ANIMAL SCIENCES
लाला लाजपतराय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय
HISAR 2010
"राष्ट्रोन्नयनं पशुवर्धनम्"

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय
हिसार – 125004 (हरियाणा)

http://www.luvas.edu.in